आलम-केलि

सम्पादक—

ला० भगवानदीन

॥ श्री ॥

आलम-केलि

२८७२

रचयिता

आलम और सेख

सम्पादक

प्रकाशक

उमाशङ्कर मेहता

प्रथमावृत्ति १०००

सं० १९७९

मूल्य १)

प्रकाशक
उमाशंकर मेहता
रामघाट, काशी।

विक्रेता

(१) एस. एस. मेहता ऐण्ड ब्रदर्स
बुकसेलर्स ऐण्ड पब्लिशर्स
रामघाट, काशी।

(२) साहित्य-भूषण-कार्यालय
बनारस सिटी।

मुद्रक —
दुर्गाप्रसाद वर्मा,
आदर्श प्रेस,
काशी

प्रकाशक का निवेदन

पाठक वृन्द !

अनेक सुन्दर ग्रंथमालाओं के निकलते हुए भी मैंने यह 'प्राचीन कविमाला' निकालना आरंभ किया है, यह शायद मेरी अनभिज्ञता वा धृष्टता ही कहलायेगी, पर क्या करूँ अपना २ शौक ही तो ठहरा। गुर्जरभाषाभाषी होने पर भी मुझे राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा का चाव लग गया है। ला० भगवानदीनजी की शुभ शिक्षा से प्राचीन कवियों का जितना कुछ महत्व समझ में आया है, उसीने मुझे इसकार्य की ओर प्रवृत्त किया है।

कई एक प्राचीन कवियों के वे ग्रंथ, मैंने एकत्र कर लिये हैं जो प्रसिद्ध तो बहुत हैं, पर कहीं प्रकाशित नहीं हुए। उनका प्रकाशित होना मुझे आवश्यक जँचता है। मैंने बहुतों को यह कहते सुना है कि अमुक कवि की कविता है तो बहुत अच्छी पर खेद है कि प्रकाशित नहीं हुई। आलम की कविता भी उसी गणना में है। इसी कारण मैं इसी ग्रंथ से आरंभ करता हूं।

यदि हिन्दी प्रेमियों ने इसे अपनाकर मेरा उत्साह बढ़ाया तो मतिराम, सेनापति, ठाकुर, पजनेश, अग्रदास, सूरदास, केशवदास और अन्य अनेक हिन्दी कवियों के अलभ्य ग्रंथों को सुन्दर सटिप्पन रूप से निकालने का साहस करूंगा।

हर्ष की बात है कि लब्धप्रतिष्ठ काव्यानुरागी मेरे श्रद्धास्पद काव्यगुरु ला० भगवानदीन जी (दीन कवि) ने टिप्पनियाँ लिखने तथा संशोधन और संपादन का कार्य स्वीकार कर लिया है, अत मुझे बहुत कुछ आशा है कि इस माला के पुष्प अत्यन्त मनोहर होंगे।

मेरी प्रार्थना है कि कुछ काव्य प्रेमी सज्जन इस माला के स्थायी ग्राहक हो जायें, तो मेरी चिन्ता दूर हो जाय। स्थायी ग्राहकों का प्रवेश शुल्क केवल ॥) मात्र है। स्थायी ग्राहकों को सब पुस्तकें पौने दामपर मिल सकेंगी।

सज्जनों से यह भी निवेदन है कि यदि उनके पास कोई प्राचीन काव्य ग्रन्थ ऐसा हो जो अबतक प्रकाशित नहीं हुआ और जिसका प्रकाशित होना वे साहित्यदृष्टि से उत्तम समझते हैं, तो मुझे उसकी प्रतिलिपि देने की कृपा करें, मैं उसे प्रकाशित करने का उद्योग करूँगा।

भवदीय

उमाशंकर मेहता

वक्तव्य

आज कल देश में अनेक ग्रंथमालाएँ निकल रही हैं। नवीन विषयों पर गद्यमय ग्रंथों की भरमार हो रही है। कोई २ ग्रंथ-प्रकाशक अनुवादों की ही झड़ी लगाये हैं, पर प्राचीन कवियों की कीर्ति के उद्धार की ओर बहुत कम ही लोगों का ध्यान आकर्षित हुआ है। प्राचीन काव्य का अनुशीलन आज दिन एक व्यर्थ काम समझा जाने लगा है, पर मेरा चित्त तो यह कहता है कि यह भारी भूल है। प्राचीनताप्रिय और सच्चिदानन्द की उपासिका हिन्दू जाति, अलौकिक आनन्ददायिनी प्राचीन काव्य को भुला रही है, यह शुभ लक्षण नहीं। नवीन प्रियता अवश्य अच्छी बात है, उन्नति की द्योतक है, स्वार्थ-साधक है, लाभकारी है, पर साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिये कि प्राचीनप्रियता भी हिन्दू जाति का एक विशेष गुण है जिसके खो देने से मुझे तो जाति का कल्याण नहीं देख पड़ता। प्राचीनों की कीर्ति का संरक्षण करना, उसका प्रचार करना, उसका सौन्दर्य बढ़ाना यदि हम से नहीं हो सका तो हमें कोई हक़ नहीं है कि हम उन प्राचीनों के गुणों के उत्तराधिकारी होने का गर्व करें और उन गुणों के वारिस कहला कर संसार में अपनी धाक जमाते हुए अनुचित लाभ उठावें और झूठी शान दिखावें। अस्तु,

उपर्युक्त विचार से प्रेरित होकर ही मैंने आज तक बकसी हंसराजकृत 'सनेहसागर' और पद्माकरकृत "हिम्मत बहादुर विरुदावली" खोजकर प्रकाशित कराने का सौभाग्य प्राप्त किया है। यह प्रस्तुत ग्रंथ तीसरा रत्न है जो मेरे परिश्रम से प्रकाशित हो रहा है। चौथा रत्न होगा मतिराम कृत 'सतसई' और पाँचवाँ होगा सेनापति जी का "कवित्त रत्नाकर"

कवि शिरोमणि श्री सूरदास जी की कविता बहुत कम पढ़ी जाती है। कारण यह है कि उनका बड़ा ग्रन्थ 'सूरसागर' साधारण पाठक खरीद नहीं सकते। अतः मैंने उनके सागर को मथकर पाँच रत्न अलग निकाल लिये हैं। उन्हें भी इसी रूप से प्रकाशित करने का उद्योग कर रहा हूँ। देखूं कौन प्रकाशक इस काम में मेरा हाथ बँटाता है।

पुस्तक परिचय

'आलम' कवि कृत 'आलमकेलि' ग्रन्थ का नाम सभी साहित्य सेवियों के मुख से सुना करता था, पर अप्रकाशित होने के कारण दर्शनों का सौभाग्य न हुआ था। यत्र तत्र फुटकर कवित्त देख कर अनुमान होता था कि 'आलम' एक अच्छे कवि होंगे।

इस वर्ष सौभाग्य वश मुझे निज शिष्य पं० उमाशंकर मेहता (पन्नानिवासी और काशीप्रवासी) के सरस्वती-भंडार में एक हस्तलिखित प्रति देखने को मिली जो सम्वत् १८५३ की लिखी हुई है और जिसके अन्त में लिखा है—

" इतिश्री आलमकृत कवित्व 'आलमकेलि' समाप्तम् ।
संवत् १८५३ समये आसन, वदी अष्टमी वार शुक ॥ "

पुस्तक देखते ही मुझे तो इतना आनन्द हुआ कि मानो पन्ना की हीरे की खानि ही मिल गई हो। मैंने मेहता जी से प्रकाशन के लिये अनुरोध किया। मेहता जी ने कहना मान लिया और फल स्वरूप यह पुस्तक आपके सामने है।

इस पुस्तक में केवल आलम ही के रचे छंद नहीं हैं, वरन् 'सेख' कृत छंद भी हैं। 'आलम' और सेख का सम्बन्ध सब ही लोग जानते हैं। छंदों में ऊंची साहित्य-मर्मज्ञता, सच्ची कृष्ण भक्ति, और अनूठी प्रतिभा का परिचय प्रतिछंद मिलता है। मुझे तो 'आलम' की प्रतिभा से 'सेख' की प्रतिभा कुछ ऊँची जँचती है। लोग कहते हैं कि 'आलम' जी 'सेख' के लिये मुसलमान हो गये, पर मुझे ऐसा जँचता है कि 'आलम' की सुसंगति पाकर 'सेख' कृष्णभक्ति में रँग कर कृतार्थ हो गई।

कविताकाल

'आलम' और 'सेख' का कविताकाल साधारणतः सं०१६४० से सं०१७५० तक माना जाता है। यह हस्तलिखित प्रति जिसके अनुसार यह पुस्तक छपी है सं० १७५३ की लिखी हुई है। इससे यह स्पष्ट है कि इसमें वे ही छंद संग्रहीत हैं जो उस समय तक बन चुके थे। यही कारण है कि इसमें 'आलम' और सेख के कुछ अधिक प्रख्यात कवित्त (जो इस संग्रह के बाद रचे गये होंगे) नहीं मिलते। उदाहरणवत आलम के ये मशहूर छंद इसमें नहीं हैं। हमारे ग्राम के निवासी और हमारे परम हितैषी मित्र बा० पुत्तूलाल जी सोनार इन छन्दों को पढ़ते पढ़ते आँसू बहाने लगते थे:—

सवैया

जा थल कीन्हें बिहार अनेकन ता थल काँकरी बैठि चुन्यो करैं
जा रसना सों करी बहु बात सु ता रसना सों चरित्र गुन्यो करैं
'आलम' जौन से कुंजन में करी केलि तहाँ अब सीस धुन्यो करैं
नैनन में जो सदा रहते तिनकी अब कान कहानी सुन्यो करैं

हमारे मित्र पुत्तूलाल जी सारंगी भी बजाते थे। बरसात के दिनों में कभी कभी यह कवित्त सारंगी पर गाया करते थे:—

कैधौं मोर सोर तजि गये री अनत भाजि,
कैधौं उत दादुर न बोलत हैं ए दई।
कैधौं पिक चातक महीप काहू मारि डारे,
कैधौं बकपाँति उत अन्तगति ह्वै गई।
'आलम' कहै हो आली अजहूँ न आये प्यारे,
कैधौं उत रीति बिपरीत बिधि ने ठई।
मदन महीप की दोहाई फिरिबे तें रही,
जूझि गये मेघ कैधौं दामिनी सती भई।

'सेख' का यह निम्नलिखित कबित्त बहुत ही मस्त हो कर गाया करते थे :—

रात के उनींदे अलसाते मदमाते राते,
अति कजरारे दृग तेरे यों सोहात हैं।
तीखी तीखी कोरनि करोरे लेत काढ़े जीउ,
केते भये घायल औ केते तलफात हैं।
ज्यों ज्यों लै सलिल चख 'सेख' धोवै बारबार,
त्यों त्यों बल बुंदन के बार झुकि जात हैं।
कैबर के भाले कैधौं नाहर नहनवाले,
लोहू के पियासे कहूँ पानी तें अघात हैं।

तात्पर्य यह कि आलम और सेख के बहुत से छंद इसमें नहीं मिलते। इसका कारण यही जान पड़ता है कि वे छंद इस हस्तलिपि के बाद की रचना हैं। यह हस्तलिपि आलम के जीवन काल में ही उनके किसी शिष्य वा भक्त द्वारा लिखी गई है। अतः हमें तो अत्यन्त प्रमाणिक जँचती है।

जीवनवृत्त

लोग कहते हैं कि 'आलम' कवि जाति के ब्राह्मण थे, और 'सेख' रंगरेजिन के प्रेम में फँसकर मुसलमान हो गये थे। सच्चे साहित्यमर्मज्ञों का मत है कि सच्चे कवियों का कोई धर्म नहीं, वे तो धर्म के दिखाऊ बंधनों को तोड़कर सच्चे प्राकृतिक सौंदर्यमय प्रेम-पथ के पथिक होते हैं। सभी देशों और सभी कालों में ऐसे कवि होते आये हैं। आलम भी वैसे ही थे।

'सेख' केवल रँगरेजिन ही न थी वरन् ऐसा जान पड़ता है कि वह सच्चे प्रेमरंग में स्वयं भी रँगी हुई थी। बड़ी प्रतिभावाली और हाज़िर जवाब थी। सेख से उत्पन्न आलम का एक पुत्र भी था जिसका नाम 'जहान' था।

कहते हैं एक बार आलम के आश्रयदाता शाहज़ादा मुअज़्ज़म (औरंगज़ेब के पुत्र) ने मज़ाक में 'सेख' से पूँछा कि "क्या आलम की बीबी आपही हैं?" 'सेख ने हँसकर तुरंत जवाब दिया था "हाँ हुजूर! 'जहान' की माँ मैं ही हूँ।" ऐसी प्रत्युत्पन्न मतिवाली और ऐसी प्रतिभावाली स्त्री पर रीझ कर आलम ने कुछ बुरा नहीं किया था। प्रत्येक सच्चा कवि ऐसी स्त्री पर निछावर होना अपना सौभाग्य समझेगा।

आलम ने 'रेखता' नाम से कुछ ऐसे कवित्त लिखे हैं जिन से जान पड़ता है कि आलम जी फारसी भाषा और उसके

साहित्य से भी अच्छी जानकारी रखते थे और खड़ी बोली में भी कविता करने के पक्षपाती थे (देखिये छंद नम्बर २६६ से २७३ तक)।

छंद नम्बर १८६ में 'सेख' ने सर्वनाम और क्रिया के ऐसे रूप प्रयुक्त किये हैं जिनसे प्रत्यक्ष मालूम होता है कि वह पंजाब निवासिनी थी। अनेक छंदों से उसकी कृष्णप्रति अटल भक्ति भली भाँति प्रगट है (देखिये छंद नं० २४८, २४६

पुस्तक आपके सामने है मेरे कहने की कुछ आवश्यकता नहीं, कविता आपसे आप रचयिता की प्रशंसा करा लेगी। हाँ ! अपने विषय में मुझे इतना कहना है कि मैंने इस पुस्तक का प्रूफ देखा है, टिप्पणियाँ लिखी हैं और यत्र तत्र लिपि-दोषों का संशोधन किया है। तो भी जहाँ जहाँ छंदों का अर्थ समझ में नहीं आया वहाँ मैंने पाठ ज्यों का त्यों रहने दिया है। यथाशक्ति मैंने उद्योग किया है, पर मुझे संतोष नहीं हुआ कि पुस्तक शुद्ध रूप से निकली है। पाठकों से निवेदन है कि उनको जो त्रुटियाँ वा अशुद्धियाँ मालूम हों उनसे मुझे सूचित करने की कृपा करें तो अगले संस्करण में संशोधन कर दिया जायगा।

हो सका तो मतिराम कृत 'सतसई' और सेनापति कृत 'कवित्त-रत्नाकर' भी शीघ्र ही इसी रूप से सेवा में प्रस्तुत करूँगा। पर यह बात पाठकों की कृपा पर ही निर्भर है आशा है कि हिन्दी प्रेमी इसे अपनाकर प्रकाशक का उत्साह बढ़ावेंगे।

श्रीरामनवमी
सं० १६७६
काशी

विनीत
लाला भगवानदीन

विषय-सूची

आलम-केलि

बाल-लीला

पालने खेलत नन्द-ललन छलन बलि,
गोद लै लै ललना करति मोद गान है।
'आलम' सुकवि पल पल मैया पावै सुख,
पोषति पीयूष सुकरत पय पान है।
नन्द सों कहति नन्दरानी हो महर! सुत
चन्द की सी कलनि बढ़तु मेरे जान है।
आइ देखि आनँद सों प्यारे कान्ह आनन मैं,
आन दिन आन घरी आन छवि आन है॥१॥

झीनी सी झँगूली बीच झीनो आंगु झलकतु,
झुमरि झुमरि झुकि ज्यों ज्यों झूलै पलना।
घूंघुरू घूमत बने घुँघुरा[1] के छोर घने,
घुँघरारे बार मानौ घन बारे चलना।
'आलम' रसाल जुग लोचन बिसाल लोल,
ऐसे नन्दलाल अनदेखे कहूँ कल ना।
घेर घेर फेरि फेरि गोद लै लै घेरि घेरि,
टेरि टेरि गावै गुन गोकुल की ललना॥२॥

१—घुँघुरा = घुनघुना, काठ का रंगीन गोला जिसमें घुँघरू या कौड़ियाँ लगी होती हैं और जो पालने में बँधा लटकता है।

जसुदा के अजिर बिराजैं मनमोहन जू,
    अङ्ग रज लागे छबि छाजै सुरपाल[1] की।
छोटे छोटे आछे पग घूँघुरू घूमत घने,
    जासों चित हित लागै सोभा बालजाल की।
आछी बतियाँ सुनावै छिनु छाँड़िबो न भावै,
    छाती सों छपावै लागै छोह वा दयाल की।
हेरि ब्रज-नारि हारी वारि फेरि डारी सब,
    आलम बलैया लीजै ऐसे नन्दलाल की ॥३॥

ह्वैहौं दधि मधुर धरनि धरयो छोरि खैहैं,
    धाम तें निकसि धौरी धेनु धाइ खोलिहैं।
धूरि लोटि ऐहैं लपटैहैं लटकत ऐहैं,
    सुखद सुनैहैं बैनु बतियाँ अमोलि हैं।
'आलम' सुकवि मेरे ललन चलन सीखैं,
    बलन[2] की बाँह ब्रज गलिनि में डोलिहैं।
सुदिन सुदिन दिन ता दिन गनौंगी माई,
    जा दिन कन्हैया मोसों मैया कहि बोलिहैं ॥४॥

ढोरी[3] कौन लागी ढुरि जैबे की सिगरो दिन,
    छिनु न रहत घरै कहौं का कन्हैया को।
पल न परत कल बिकल जसोदा मैया,
    ढोर भूले जैसे तलबेली लगै [illegible] को।

१—सुरपाल = इन्द्र। २—बलन की बाँह = बलदेव जी का हाथ पकड़े हुए। ३—ढोरी = आदत, बानि।

आँचर सौं मुख पोंछि पोंछि कै कहति तुम,
ऐसे कैसे जान देत कहूँ छोटे भैया को।
खेलन ललन कहूँ गए हैं अकेले नेकु,
बोलि दीजै बलन[1] बलैया लाग भैया को॥ ५॥

ऐसो बारो बार[2] याहि बाहरो न जान दीजै,
बार[3] गये बौरी तुम बनिता सँगन की।
ब्रज टोना टामन निपट टोनहाई डोलैं,
जसोदा मिटाउ टेव और के आँगन की।
'आलम' लै राई लोन वारि फेरि डारि नारि,
बालि धौं सुनाइ धुनि कनक कँगन की।
छीर मुख लपटाय छार घकुटनि[4] भरे, छौना!
नेकु छबि देखो लगन-मँगन की॥ ६॥

बीस बिधि आऊँ दिन बारीयै न पाऊँ और,
याही काज याही घर बाँसनि की बारी है।
नेकु फिरि ऐहैं कैहैं दै री दै जसोदा मोहि,
मो पै हठि मागैं बंसी और कहूँ डारी है।
'सेख' कहै तुम सिखवो न कछु राम याहि,
भारी गरिहाइनु की सीखे लेतु गारी है।
संग लाइ भैया नेकु न्यारो न कन्हैया कीजै,
बलन[5] बलैया लैकै मैया बलिहारी है॥ ७॥

१—बलन = बलदेवजी। २—बार = बालक। ३—बार = द्वार।
४—घकुटनि = घुटनों। ५—बलन = बलदेवजी।

मन को सुहेली[1] सब करतीं सुहागिनि सु—
अंक की अँकोर[2] दै कै हिये हरि लायो है।
कान्ह मुख चूमि चूमि सुख के समूह लै लैं,
काहू करि पातन पतोखी[3] दूध प्यायो है।
आलम अखिल लोक लोकनि को अंसी[4] ईस,
सूनो कै ब्रह्मांड सोई गोकुल में आयो है।
ब्रह्म त्रिपुरारि पचि हारि रहे ध्यान धरि,
ब्रज की अहीरिनि खिलौना करि पायो है ॥ ८ ॥

चारोदस भौन जाके रचा एक रेनु कोर्लो,
सोई आंगु रेनु लावे नन्द के अवास की।
घट घट शब्द अनहद जाको पूरि रह्यो,
तेई तुतराइ बानी तोतरे प्रकाश की।
'आलम' सुकवि जाके श्वास तिहुं लोक बसै,
तिन जिय त्रास मानी जसुदा के त्रास की।
इन के चरित चेति निगम कहत नेति,
जानी न परत कछू गति अविनास की ॥ ९ ॥

१—सुहेली = सुखदायक लीला। २—अँकोर = अँकवार।
३—पतोखो = पत्तों की बनी छोटी दोनिया। ४—अंसी = अधिकारी।

वयःसंधि-वर्णन।

कंज[1] की सी कोर नैना ओरनि अरुन भई,
कीधौं चँपी सींव[2] चपलाई ठहराति है।
भौंहन चढ़ति डीठि नीचे को ढरनि लागी,
डीठि परे पीठि दै सकुचि मुसकाति है।
सजनी की सीख कछू सुनी अनसुनी करै,
साजन की बातें सुनि लाजन समाति है।
रूप की उमँग तरुनाई को उठाव नयो,
छाती उठि आई लरिकाई उठी जात है ॥१०॥

छुटि आईं भौंहैं मुरि, चढ़ी हैं उचौंहैं, नैना
मैन मद माते पलकन चपलई है।
कटि गई छूँटि पै सिमटि आई छाती ठौर,
ढौर[3] तें सँवारी देह और कछु भई है।
आलम उमँगि रूप सोना सरवर भयो,
पानिप तें काई लरिकाई मिटि गई है।
झलक सी भई पियरस पियरई किधौं,
कछु तरुनई अरु नई अरुनई है ॥११॥

१—कंज की……अरुन भई = नेत्रों के कोनों में कुछ कुछ कमलदल की कोरों की सी लालिमा आ चली है। २—चँपी सींव……ठहराति है = चंचलता की सीमा सी बाँध दी गई है। ३—ढौर = ढंग।

काँधे ही काँधेलो अलवेलोपनो खेलो चाहै,
पाछे ही विसारे[1] खेलैं भाँई देखै कूप की।
सावकी कुरंगी की सी संध्या को मयंकु जैसे,
लाँक बिनु डोले औ निसंक सीत धूप की।
आलम भ्रुकुति[2] थोरी हँसे ते हँसनि पुनि,
हरत हरी को मनु आनन अनूप को।
चंदन चखौंड़ा[3] भाल गोरे अंग आँगीलाल,
पूँछे ते पिछौंड़ी जाति मौंड़ी औंड़ी रूप की ॥१२॥

नवोढ़ा वर्णन

कोनी चाहौ चाहिलौ[4] नवोढ़ा एकै बार तुम,
एक बार जाय तिहि छलु उर दीजिये।
'सेख' कही आवन सुहेली सेज आवै लाल,
सीखत सिखैगी मेरी सीख सुनि लीजिये।
आवन को नाम सुनि सावन किये है नैना,
आवन कहै सुकेसे आइ[5] जाइ छीजिये।
परवस बसि करिवे को मेरो वसु नाहिं,
ऐसी बैस कहो कान्ह कैसे वस कीजिये ॥१३॥

१—विसारे = विषधर, सर्प (बाल)। २—भ्रुकुति = खीभती है।
३—चखौड़ा = तिलक। ४—चाहिलो = चाह करनेवाला। ५—आइ = आयु।

जोति सों हियें में जागी मैं तो जानी जैसी लागी,
सोच तें हिये[1] में लाल ! लागी नारि[2] ह्वै नई।
रसहि न जानै कहे बिरह न मानै ताको,
लैहौ छबि छाय कछु मूरि मोहनी भई।
'आलम' रसाल नन्दलाल सुनि जानि-मनि[3]
मोंहि ऐसी कठिन सुदुहूँ दिसि की भई।
तुम रिझवार प्रेम-पीर पियराने कहूँ,
अंकम की संक सुनि प्रिया पीरी ह्वै गई ॥१४॥

कोकिल किलक बानी सुनि सुनि स्यानि मानी,
वही जानि तोपै सीखि सुरहिं सुधार्यो है।
तन हूँ की बानी[4] ताकि चंपाऊ उजार गयो,
यहै चेति चित हू तें भौंरनि उतार्यो है।
'आलम' कहै हो पूरो पुन्य को सुहायो फोल,
मुख की निकाई हेरि हिमकर हार्यो है।
रूप रयो भयो नाहीं रीझि गयो मन माहीं,
तो पर ह्वै मार आपा वारि फेरि डार्यो है ॥१५॥

पौन के परस छुद्र-घंटिका के डोलैं डोलै,
हार हू न हिये धरै खरी कटि खीनी है।
बेनी की लटक जिनि ग्रीवा कों लरक जाय,
छूटो अलकनि छबि काकी लूटि लीनी है।

१—हिये ··· नई = गर्दन झुकाकर हृदयसे लग गई है। २—नारि = गर्दन। ३—जानिमनि = ज्ञानी शिरोमणि। ४—बानी = (वर्ण) रंग। (नोट) 'जायसी' मे भी इस शब्द को इसी अर्थ में लिखा है।

'आलम' कहै हो तनु कनकमै तायो तामैं,
पैन मैन जोति रस हीरा ओप दीनी है।
और है सिंगार भार तुहीं आपनो सिंगार,
विधि है सुनार तू जराउ जैसी कीनी है ॥१६॥

चितवत औरै लागैं बोले औरैं जोति जागै,
हँसे कछू औरैं रूसे औरई निकाई है।
अङ्ग अङ्ग मोहनी मोहन मन मोहिवे कौं,
एन-नैनो[1] मानो मैन मोहनी बनाई है।
'आलम' कहै हो रूप आगरो[2] समातु नाहीं,
छवि छलकति इहाँ कौन की समाई है।
भूषन को भार है किसोरी वैस गोरी वाल,
तेरे तन प्यारी कोटि भूषन गुराई है ॥१७॥

ऐसे रूप देस की लुनाई लूटि लई है सु,
नई नई छवि अङ्ग अङ्ग उमगति है।
जाई की सी माल सु लजाइ रही काहे तें सु,
जाइ जाइ हरि जू के हिये में खँगति[3] है।
'आलम' कहै हो बड़े वार ह्वै सेवार भये,
तेरी तरुनाई सु-जराइ सी जगति है।
मोतिन को हार हिये हौंस तें पहीरै नहीं,
पोत[4] ही के छुरा अपछुरा सी लगति है ॥१८॥

१—एननैनी = मृगनैनी। २—आगरो = बहुत अधिक। ३—खँगति है = चुभती है, चोट करती है। ४—पोत-छरा = काँच की छोटी गुरियों की कंठी।

प्रौढ़ा वर्णन

सौरभ सकेलि मेलि केलि ही की बेलि कीन्हीं,
सोभा की सहेली सु अकेली करतार की।
जित ढरकै हो कान्ह तितही ढरकि जाय,
साँचे ही सुढ़ारी सब अंगनि सुढार की।
तपनि हरति कवि आलम परस सीरी,
अति ही रसिक रीति जानै रस-चार की।
ससि हूँ को रसु सानि सोने को सरूप लै कै,
अति ही सरस सो सँवारी घनसार[1] की ॥१९॥

पातरी अँगेठी[2] आँगी आँअंग हू सों लागी रहै,
झलकतु अंग झीनी झलक दुकूल की।
'आलम' सुधारे कच कारे सटकारे भारे,
डारे आछे पाछे प्यारी स्याम सुखमूल की।
काम के संजोग धाम दच्छ कटाछन कीने,
आछी छवि सैनिक सँवारी युद्ध मूल की।
कब हूँ कै कोर नैन ओरनि लौं आवैं चले,
कब हूँ कै धावै द्युति आभा स्रुतिफूल[3] की ॥२०॥

गोरे आंक थोरे लांक थोरी बैस भोरी मति,
घरी घरी और छवि अङ्ग अङ्ग मैं जगै।

१—घनसार = कपूर। २—अँगेठी = (अंग + इट) अंग के लिये जितनी चाहिये, ठीक वनान की, चुस्त। ३—स्रुतिफूल = (श्रुतिफूल) कर्णफूल।

कहि कवि आलम छलक नैन मैन मई,
मोहनी सुनत बैन मन मोहनैं ठगै।
तेरोई मुखारविंद निंदै अरविन्दै प्यारी,
उपमा को कहै ऐसी कौन जिय मैं खगै।
चपि गई चन्द्रिकाऊ छपि गई छबि देखि,
भोर को सो चाँद भयो फीकी चाँदनी लगै॥२१॥

हीरा से दसन मुख बीरा नासा कीर चारु,
सोने से शरीर रवि चीर चली धाम को।
ललित कपोल दग डोलैं कवि आलम सु,
बोली मृदु बोलि कै रिझावै लाल स्याम को।
केसरि विचित्र नीको केसरि को टीको सोहै,
ते सरि न पावैं भूलें कैसी सची बाम कों।
बेनी गूथें फूल लर गरे मखतूल छुटा,
फूल की कमान देखि भूल परी काम को॥२२॥

अभिसार

सावन की सांझ की सोहावनीयै ठौर तहां,
जूही जाही बेलि बौरि फूलि बन छाइहै।
आलम पवन पुरवैया को परस पाछे,
सीरी आये रसिक सरस सरसाइहै।

आली चलि चूनरि पहिरि हरियारी भूमि,
तेरे चमकत चपलाऊ चपि जाइहै।
औरनि के आये बनि और आइहै सुपुनि,
हौं तो आइहौं न यह बेरी बनि आइहै ॥२३॥

जागन है जोन्ह सोरी लागन दे रात जैसे,
आन सारी सेत में संघात को न जानिहै।
अथये की ओर परी साथ सौजै मो सी नारि,
आतुरी न होइ, यह चातुरी की खानिहै।
घूंघट ते 'सेख' मुख जोति न घटैगी छितु,
झीनो पट न्यारिये झलक पहचानिहै।
तू तो जानै छानी[1] पै न छानी या रहैगी बीर,
छानी[2] छबि नैनन की काको लोहू-छानिहै[3] ॥२४॥

मानिनी

समुद को पार है सुभूमि हू को वार[4] है पै,
प्रीति को न पार वार कौन विधि कीजिये।
'सेख' कहै देखे अनदेख्योई करत केहूं,
अंक भरि भेंटे हू वियोग रस भीजिये।

१—छानी=ढकी हुई। २—छानी=छन छन कर निकली हुई।
३—छानिहै=पियेगी। ४—वार=छोर, अंत।

मेरे कहे वारी[1] तू निहारी जो विहारी तन,
हेरे ज्यो[2] हठतु[3] हेतु एतो कत छीजिये।
जाकी वास बेधे मन फूल देख्यो चाहे जनु।
हेरे ते कुसुम जानि येहूँ कर लीजिये ॥२५॥

बनिता री बनि बनवारी बोलो बन बन,
श्रवनन करि बेनु बाजै बनी बानी सों।
माननीन मुचे मानु एते मान को है मानो,
मेरी न मनाई माने मोहन की मानी सों।
आलम सुरति सुख कहा जानै का सों कहैं,
कहे रैन बीति जैहै एक ही कहानी सों।
पान सौं य पान जोरि प्रानपति प्यारे संग,
ऐसे मिलि प्यारी जैसे पानी मिले पानी सों ॥२६॥

भौंहनि चढ़ाइ कै रिसाइ नैन नाइ रही,
सांस हूं न चलै जड़ जद्‌पि कियो है तनु।
कहै कवि आलम बंधन पेंचि खैंचि मनु,
कहा भयो जो पै हठु कीनो है राँक को धनु।
याही को बरजि डोलै वेसरि को मोती प्यारी,
जेहि लागि डोल्यो डोल्यो फिरत लाल को मनु।
ताकी झलकनि अधरनि पर छाई मार्इ,
कहाँ है रखाई तू तो रूसे हू हँसति जनु ॥२७॥

१—वारी = बलिहारी जाऊँ। २—ज्यो = (जीव) मन। ३—हठतु = हठ करता है।

चंद-कर पूरन परे जु कुमुदिनि पर,
वे हू कोने हाइ भाइ मानिनी सुभाइ कै।
डोलैं दल बिगसि प्रकास्यो पौन मंद जाइ,
कुसुम डोलाइ छाई जपा जूही आइ कै।
आलम सुगंध घन केतकी कपूर सन,
लायो लाइ कालिन्दी के कन सुख चाइ कै।
आली तजि मौन करि गौन हित-भौन चलि,
केल करि केल-कुंज[1] केलि के उपाइ कै ॥२८॥

काहे को खुभी उतारो बहुगे तरौना धारौ,
कोटिक तरौना खुभी छबि पर वारिये।
चन्दन को बेंदा सोहै उडु बिधु रवि को है,
अंजन हूँ सेत लागे ऐसी आँखि कारिये।
तेरे आँग की निकाई कहाँ लौं कहौंगी माई,
रति हूँ पचति अजौं ध्यान हूँ न धारिये।
पतोई बिलम्बु भारी करो जिनि और प्यारी,
आलम अकेली कुंज एकले बिहारिये ॥२६॥

पिय की कहनि हा हा आतुर ह्वै पाइ गहैं
ताको यह मानवती आनियो उपाउ है।
तू चलि हौं आई तौ लौं बात ही चलाई जाय,
चतुर सखीन नेक देखिबे को चाउ है।

१—केलकुंज=केला (कदली) की कुंज।

कहै कवि आलम मुकै हूँ रीझि खीझि जब,
मानु छाड़ि बालि तब बोलिबे को दाउ है।
नाहिं किये नाहिं बलि नाहिनैं मनाई जाति,
जेतो नाहिं तेती रुचि तिय को सुभाउ है ॥३०॥

आई सोरी साँझ भीर गैयाँ दौरि आई घर,
बन बन पुर बीच पूरि धूरि धाई है।
आलम चहूँधा चढ़ि रूखनि चिरैयाँ बोलीं,
भूपन बने हैं बलि बेरौ बनि आई है।
आली तौलौं चलि जौलौं लाली में लपेटो ससि,
रबि को न छबि छिन जोन्ह ना जनाई है।
छाह हूँ के छल मिलि हौंही भई तेरी छाँह,
जौ लौं परछाँही पर छाहीं आनि छाई है ॥३१॥

छलिबे को आई ही सु हौंही छलि गई मनु,
छीकतो न छलु करि पठई बिहारी हौं।
तूं तौ चल है पै आली हौंहीये अचल सी हौं,
सादी रूप-रेख देखि रीझि भीजि हारी हौं।
'सेख' भनि लाल-मनि बेंदी की बिदा है ऐसे,
गोरे गोरे भाल पर वारि फेरि डारी हौं।
बैरिनि, न होहु नेकु बेसरि सुधारि धरौ,
हौं तो पलि बेसरि के 'बेह'[१] बेधि मारी हौं ॥३२॥

१—बेह = वेध, सूराख, छेद।

फूली सुजुन्हाई कुसुमाकर[1] की रैन की श्री,
फूल्यो बन घन रसबीथिन बिहरि लै ।
आलम सुभग ये सुभायनु की सोभा तन,
आभा मिलि कोटि कोटि आभरनु करिलै ।
मंजन के आदि ते पै न्यारे हैं सिंगार हार,
अंजन की रेख दृग खंजनु में धरिलै ।
चन्द्रमा-लिलाटी तैंऽब एती कहा ठाढ़ी बेगि,
पाटी पारि प्यारी कजराटी चीर करि लै ॥२३॥

सेत संख बिधु जोति अंजन जुहर सजि,
बक्र[2] धनु अहन सुमनि सँग लाए हैं ।
पेम सुरा सुधे धेनु सुन्दर समान रंभा,
'आलम' चपल हय काम के सधाए हैं ।
प्रीति मधु[3] पूतरी कलप लच्छी पूरन,
धनंतरि सुदिष्टि गज गति पलटाए हैं ।
काहे को समुद्र मथि देवतान श्रम कीनो,
चौदह रतन तिय नैननि में पाए हैं * ॥२४॥

जानति हैं नीके रति रतन जेतो जेती,
याते रतिरनि हूं के तेजहि तजे है री ।
अबेरो कै आई है सबेरो बन नेरो यह,
मेरो कह्यो किये कैहौ तेरो कहा जैहै री ।

१--कुसुमाकर = बसंत । २--बक्र = तिरछे कटाक्ष । ३--मधु = अमृत ।
*नेत्रमें चौदह रत्न दिखलाये गये हैं । यह कमाल इसी कविने दिखलाया है ।

बिदा करि मोंहि दै तूँ बादि हीं पठावै बैठी,
कान्ह को बदन देखि बेदनि बढ़ै है री।
'आलम' बिलंबिये ना चलि आली लालन पै,
लाख ललना की दुति लखे ही लजैहै री ॥२५॥

छल छाँड़ि छिन छिया छबीली छबीले बोलि,
छोड़िहै न हा हा किये मेरे पायँ छू न री।
आन तीय तिनके री तन तन ताकतिये,
तिन तन तनकहीं तिन तोरि तू न री।
काँछे आछे स्वच्छ कान्ह कालिंदी के कच्छ कवि,
'आलम' कछू उछाह गावे तेरे गून री।
सुनि प्यारी सोच न सकोच ऐसे लोचनन,
चलि चित चाइ चाहि रचि चीर चूनरी ॥२६॥

चोली चारु चीर कै चरन धरिबे को भई,
चाहै पति रुचि कै तू रचो सुखचारि को।
नीर भरे काहे नये नीरज-नयनि नारि,
दान कान्ह नेरे हुती न्यारी सोऊ नारि की।
तेरेई महतु हेतु ताते हौं कहति तो सों,
'आलम' कहै सुआली अति मनुहारि की।
मूरख न होहि री न मुख मोरि मेरी सिख,
मान की मुरति सुनि मुरली मुरारि की ॥२७॥

हौन भई रजनी रसिक रितुराज की, न
हीन भयो भानु, ताते लाढ़च न डाढ़ी री।

प्राचियो रची पै तू न रची मेरे बचननु,
अलि-माला बोली पै तू बोलहू न बोली री ।
द्रुम बेली हलीं तू न हली अली चलिबे कों,
चकई मिली पै तू न हियो खोलि बोली री ।
उये रबि कौन काज उठन रूठन तेरो,
'आलम' न बंचि काल सुरति कलोली री ॥२८॥

तू तौ मेरी प्रानप्यारी प्रान की कहत तोसों,
ऐसे प्यारे प्राननाथ पर प्रान वारिये ।
साँवरो सँवारे सैन सुनि री सबारे हू सों,
ऐसी सैन सौरि[1] क्यों न आपको सँवारिये ।
'आलम' पियूषनिधि अधर अधर जोरि,
सरस अमिय जाहि पूजै न पबारिये ।
अनेग[2] नारीनु तजी नागर सुनग[3] नारि,
तासों री न गहि मानु होहि न गँवारिये ॥२९॥

अरी अनबोली तूँ तौ बोलेहु न बोलै पुनि,
अनँग बिली कै ब्यापै अनबोली जाहिगी ।
करि कह्यो, गौन करि हठ हू न करिये सो,
करसों ऽब कर जोरि करि कर लाहिगी ।
'आलम' समुझि होहि सामुहीं समीप सम,
ऐसो स्याम तजि स्यामा काहे मैं समाहिगी ।

१—सौरि = स्मरण करके। २—अनेग = अनेक, बहुतसी। ३—सुनग = सुन्दर रानवत ।

२

पूंछे तें पिछौरी तानि पाछे दै रही है मोहिं,
 पिय रस छुकें प्यारी पाछे पछताहिगी ॥४०॥

नेक निसि नासिहै तौ नारि न सकैगी सहि,
 मनसिज सोस[1] संक मेरे संग नासु री।
ऐसी हुलसानी ऐसे समै कैसे स्याम जूसों,
 सारस सी अँखियनि ऐसे भरै आँसु री।
किसलै कुसुम सैन 'आलम' संचित सुख,
 सविता-सुता[2] समीप सरस निवासु री।
बिसरैगो रोस रिस सब ही रसिक संग,
 सुर सौं या बन में सुनैगी नेकु बाँसुरी ॥४१॥

मानिनी अनमनी है मौनो को सो मौन गह्यो,
 मानो कहूँ मन गयो तेरे मन माँह सों।
हारि सौं मुरारि बैठे हारी मनुहारि कै तू,
 नारि यों निवारि आरि[3] जोरि बाँह बाँह सों।
'आलम' अकेली तू मैं आजु कछु और देखी,
 औरै सुनी औरै चालि औरनि की छाँह[4] सों।
छपाकर छपे छिनु छीन भई छपा[5] छीआ[6],
 छाँड़ि दै छबीली अब नाहीं कीयो नाह सों ॥४२॥

१—सोस = शोच। २—सवितासुता = यमुना। ३—आरि = हठ।
४—छाँह = कपटमय शिक्षा। ५—छपा = रात्रि। ६—छीआ = घृणात्मक शब्द।

बातौ न कहत सुनि बात सूधे गात बौरी,
पेम-उतपात[1] कछू और बात बढ़ी है।
प्यारो पियराइ पल बिकल परै न कल,
पलक पलक पुनि प्यारी जोभ रढ़ी है।
'आलम' उदास[2] बस रहत उसास लै लै,
कछु पढ़ि डाख्यो कहौ कौन मन्त्र पढ़ी है।
तेरी चितवनि भयो चकित अचेत माई,
चेटक सो आग्यो कछु तूही चित चढ़ी है ॥४३॥

उनकी बिकलताई देखि अकुलाई हौंही,
लागै घड़ी बार समाचार कैसे कै कहौं।
तपत उसास आवै बारि न बयारि भावै,
हौंही न बयारि भई सीरी सीरी है बहौं।
'आलम' निपट अकुलाये हैं री लाल तुव,
रस बस भये अब पायँ कर सों गहौं।
तजिये बिलम्ब यामैं उनको अकाज होय
चलिये कृपालु ह्वै कै न्यारे कैसे हौं सहौं ॥४४॥

कहूँ भूल्यो बेनु कहूँ धाइ गई धेनु कहूँ,
आये चित चैनु कहूँ मोरपंख परे हैं।
मन को हरन को हैं अछरा[3] छरन को है,
छाँह ही छुवत छवि छिन ह्वै कै छरे हैं।

१—पेम-उतपात = प्रेम-कलह, प्रणयमान। २—उदास = शोक।
३—अछरा = अप्सरा।

'सेख' कहै प्यारी तू जौ जबहीं ते बन गई,
तब ही ते कान्ह अँसुवनि सर करे हैं।
याते जानियति है जू येऊ नदी नारे नीर,
कान्ह घरे बिकल बियोग रोय भरे हैं ॥४४॥

तेरी गति देखें गति मति मेरी भूली और,
तैसेई पिया के रोम रोम कलमले हैं।
'आलम' अहै तो पापी दुहुँ दिसि पैनोई यो,
पेम-परसंग के कहूँ ना ढंग भले हैं।
या घरी तें वैसे ही उहाँही उहौ और दौठि,
पीठि पलटे तें मानों कान्ह काहू छले हैं।
चूर ह्वै कै चेत्यो कहूँ वाँकी सूधी चालि आली,
तूं तो चलि आई वाके नैनाऊ न चले हैं ॥४६॥

दोहन के मिस तिहि गोहन[1] लगाइ चलो,
दोहनी भुलानी मन मोहनी मयी भयो।
'आलम' कहै हो गुन[2] गेहऊ बिसार्‌यो उन,
देहऊ सँभार्‌यो नहीं नेहु ऐसो है नयो।
सिथिल सिंगार सबै छूटे हुते बार तू जु,
लगोहीं किवार झांकि हरि हरि सो लयो।
अधर सुखात बूझें आंखियो न आवै बात,
आधो मुख देखि मन आधोआध[3] ह्वै गयो ॥४७॥

१—तिहि गोहन लगाइ चला = उसके निकट गई। २—गुन = हालत, दशा। ३—आधो आध = दो टुकड़े, घायल।

साधे राज हंस ते तौ हाँसनि हँसाइ भयो,
ऐ री तेरी गति देखि, फिरो गुन करी[1] को।
लांक की लचक लसे लहँगा की ढिग[2] दुरै[3],
चूरी ही मैं चाहि चूर भयो वाही घरी को।
'आलम' अजहु आहि रस बस पखो जौ लौं,
जग्यो नहीं जोग वा वियोग-बिस-भरी को।
रूप गुन आगरी तू नागरी तैं आगे[4] ह्वै कै,
तैं जु डग भरी डगमग्यो मन हरी को ॥४८॥

जोगी कैसे फेरनि, वियोगी आवै बार बार,
जोगी ह्वै है तौ लगि वियोगी बिललातु है।
जा छिन ते निरखि किसोरी हरि लियो हेरि,
ता छिन ते खरोई धरोई पियरातु है।
'सेख' प्यारे अति ही बिहाल होइ हाय हाय,
पल पल अंग की मरोर मुरछातु है।
आन चाल[5] होति तिहि तन प्यारी चलि चाहि[6],
बिरही जरनि ते बिरह जख्यो जातु है ॥४९॥

नीर सौं रचै न रसकन को दुरै न ऐसे,
पेम परतछ ज्यों पुरैन को सो पातु है।
नेक डीठि जोरतही चोरी भई चातुरी की,
गोरी गुन आगरी गरतु याही गातु है।

१—करी = (करि) हाथी। २—ढिग = गोट, संजाफ। ३—दुरै = आसक्त होगया। ४—आगे ह्वै कै = बढ़ कर। ५—चाल = दशा। ६—चाहि = देख ले।

तेरे अरु पी के नितु ही के समाचार हैं री,
का की कहौं तोसों हरि ज्यौं ज्यौं बिललातु हैं ।
तनक मैं बेग ऐसो मद हू को नाहीं माई,
जैसे बेग नैननि मैं नेहु आइ जातु है ॥५०॥

संकेतस्थल वर्णन

कोमल सिखाय जाय धीरज्जु बँधाइ लाय,
बतरस लाय कही नेह की जु बात है ।
'आलम' सुकवि कछु सोच ही मैं लोच्यो मन,
कान्ह के बचन सुनि कानन हितात हैं ।
जेतक नवोढ़ा हियो पोढ़ा कै कै पिय तन,
देखै दुरि दुरि नैना लागे याही घात हैं ।
चले डीठि कोर फिरे घूघट के ओट ह्वै कै,
लाजन के मारे तारे नीचे भये जात हैं ॥५१॥

आई आई है कही तो आई सखी धाइ सब,
उन्हें देखि आई आन्यौं झूठे ही कहति हैं ।
सुनि सुनि पाय धारे 'सेख' प्यारी सनमुख,
ताकि मुख मोहनी सुभ्रम ही गहति है ।

अंक भरि लीन्हो परजंक पर पौढ़ि तब,
सपनो समुझि वारि अँखियाँ भरति है।
बिरही ही भारी सुधि अजों न सँभारी अब,
तुम जानो प्यारी हम न्यारी हैं रहति है ॥

प्यारी पिय दोऊ पहिली ही पहिचानि भये,
प्रान जनु पाये ज्यों ज्यों राति नियराति है।
'आलम' सकुचि लग-लोगनि[1] की लागी रहै,
दुरि दुरि देखें डीठि कैसे कै अघाति है।
लाज हू की ठौर तिहि ठौर है सचेत इत,
कोर हू सों जोरि नैन सखी मुसकाति है।
बाँधति दगंचलनि बीच मनु मानो चलि,
चिकने से नेह गाँठि छूटि छूटि जाति है ॥५३॥

सरद उज्यारी निसि सीतल समीर धीर,
सोवत पियारी पिय पाये सुख सैन के।
'आलम' सुकवि आगे जागैं वै रसाल लाल,
बालहि जगावैं लगे लोभ बाल-बैन के।
चिलक सरीर रोमराजी राजैं पिय पानि,
पल्लव उठे हैं जैसे चंदन में चैन के।
सकुची पनच[2] उतरें तें चाँप चारु सोहै,
धरे वे विचित्र मानों पाँचों बान मैन के ॥५४॥

१—लग-लोगनि = निकटस्थजन । २—सकुची पनच = सिकुड़ी हुई प्रत्यंचा ।

२८८३

घूंघट जवनिका में कारे कारे केस निसि,
खुटिला जराउ जरे डीवटि उंजारी है।
उघट[१] किलक कटि किंकिनी नूपुर बाजैं,
नैना नट नायक लकुट लट धारी है।
कहै कवि 'आलम' सुरति बिपरीति समैं,
श्रमजल अंजुली पुहुप झरि डारी है।
अधर सुरंगभूमि नृपति अनंग आगे,
नृत्य करे बेसर को मोती नृत्यकारी है ॥ ५५ ॥

नैसीये तरल तमधार सो तमाल बेलि,
रही हिलि मिलि अलि डोरनि के जोर सौं।
कहूंये ललित रन्ध तारे से उज्यारे न्यारे,
कहूँ रहे एक है कलिन्दी छबि छोर सौं।
कहै कवि 'आलम' किलक हांसी और ध्वनि,
सुनिये न आन बानी निजु मन्द सोर सौं।
कामिनी बिलासी कारे कुंजनि में कारे कान्ह,
जामिनि कहत जाम द्योस भयो भोर सौं ॥ ५६ ॥

१ उघट—सम की ताल। यह ५५ वाँ छंद बहुत ही उत्तम उक्ति है।

नायक की दूती

काम रस माते है करेरी केलि कीन्ही कान्ह,
फूलनि की मालिका हू मींड़ि मुरझाई है।
'आलम' सुकवि यहि और सी न जानो बलि,
ऐसी नारि सुकुमारि कहौ कौने पाई है।
कमल को पात लै लै हाथु याको गात छूजै,
हाथ लाये मैली होय गात की निकाई है।
अंचर दै मुख सनमुख तासों बात कीजै,
ना तरु उसाँस लागै मुकुर की हाई[1] है ॥५७॥

हौं तो ल्याई कालि प्यारे कोटिक जतनु करि,
तुम ऐसे रोस है रिसाई सुनि कहा जु की।
'आलम' विलोकि मोहि मुख मोर्‍यो तौ[2] मैं आइ,
मैं हूं मन में कह्यो सुबीतो रैनि आजु की।
अलप वयस अलबेलीयै खरोयै बाल,
नवेली न लीजै यों खिझाइ बसिता[3] जु की।
कर परसत कुँभिलात कलेवर वाको,
वाही तो है एही लाल फूल की सी नाजुकी[4] ॥५८॥

१—मुकुर की हाई है = आईने की तरह उसका मुख मलीन हो जायगा।
२—तौ में आइ = ताव में आकर, क्रुद्ध होकर। ३—बसिता = बरपता।
४—नाजुकी = सुकुमारता।

जबहीं तू देखी ग्वारि वारि-बांसुरी बिसारि,
तनु मनु मोहिं भयो महा दुखदाई है।
कछु न सोहाय पै उसांसनि बिहाय दिन,
याही की सुरति चित हित सों हिताई[1] है।
'आलम' कहै हो पर पीर की हरनहारि,
चितु की कहानी मुसुकानि ही में भाई है।
तेरे तो वचन मेरे प्रान के अधार हैं री,
हा हा कहि कैसे कैसे समाचार ल्याई है॥ ५६ ॥

कान झाँकी कौरे[2] लागि गोरी गोरी जैसी आगि,
तबहीं तें आँखिन में आगि सी बरति है।
आंजे नैन खाये पान हीरा जरी बीरैं[3] कान,
दसन की जोति छबि हीरा की हरति है।
ज्यों गई लगाइ मेहु पैठी है भुलाय गेहु,
पैठी भौंहै देखि देह पैठियै परति है।
मनु खोय पैनी भई पांजरनि बेधि गई,
काजर की रेख उर जाजर[4] करति है॥ ६० ॥

कुसुंभी पहिरि हिये कुसुम के हार गूँथे,
केसरि कुसुम लखि लागैं दृग दूत री।
अछराते[5] आछी आछे चच्छु छबि छोरनिली,
आछी आछी-काछी आँगी उरज अछूत री।

१—हिताई है=अच्छी लगी है। २—कौरे लागि=द्वार के एक पाले से लगकर।
३—बीरैं=ढारैं। ४—जाजर=छेददार (जर्जरित)। ५—अछरा=अप्सरा।

आज हीं मैं देखी कवि आलम अकेली बाल,
चाँद सो अथैगो अबै अटा हीं ते उतरी।
चितवन हूँ सों प्यारी हित चित बसि करि
चित में समाय रही चित्र की सी पूतरी ॥६१॥

मुदित सरोज सम सुभग उरोज उर,
चातुरी के चोज मैं मनोज-बेलि वै गई।
कमल से हाथ रंभ जंघा गौन हाथी को सो,
हाथ ही हाथन सब स्यान मूसि लै गई।
अलबेली आलम मदन महा मोहनी सी,
मोतन लगाइ पीर महा मोह दै गई।
सिसुता की सानी वैस रूप की जुन्हाई जैसे,
आधे ही निहार नैना आधे आध[1] कै गई ॥६२॥

तबहुँ पठाई हौं मनाई जाय आई हुती,
उनहीं कह्यो जनाय जानो ऐसो स्यान है।
अब हौं जौ जाउँ लीनो नाउँ दीनो चाउ नहीं,
उतर न पायो फिरि आई ऐसे मान है।
'आलम' सुकवि काहू कान लागि कीनी ऐसी,
आउ बलि ऐहै मतो यहै मेरे आन है।
अनमने होहु न अबोले[2] कछु याते कान्ह,
आन भाँति कहीं मोहि रावरे की आन है ॥६३॥

१—आधेआध कै गई = दो टुकड़े कर गई। २—अबोले = चुपचाप, मौन

कहौगे बसीठी यह डीठी[1] है करति आगें,
पाछें चढ़ि बिरह चहूँघा बैठि कूकिहै।
नेकु मग जात देखि ऐसे मुरझाइ रहे,
घात सुनि गात तौ पतौआ है कै सूकिहै।
कौवरे हिया के तुम कठिन कटाछ कान्ह,
पैठि जैहै पीठि ह्वै कहूँ जु ढिग ढूकिहै[2]।
यहै डीठि मूठि सौं चढ़ैगी हियौ बेधि बेधि,
बहै नैना धनुक न बहे सर चूकिहै ॥६४॥

यहै उनहारि रीझि आई हौं निहारि मुख,
कछुक सरद ससि कैसी अनुहारि है।
कौन धौं सँवारि कीन्हों सोभा को विचार चारु,
चार चार सोधि मुख-चारि हू बिचारिहै।
बिन हू सिँगार कबि 'आलम' सिँगार्‌यो तन,
गोरे आंक थोरे लांक सादी सूधी वारि है।
कहिबे को मैनका पै रतियो न रूप ऐसो,
ऐसी कान्ह देखे बनै जैसी नीकी नारि है ॥६५॥

अंग नई जोति लै बरंगना विचित्र एक,
आँगन मैं अंगना अनंग की सी ठाढ़ी है।
उजरई की उज्यारी गोरे तन सेत सारी,
मोतिन की जोति सौं जुन्हैया मानो बाढ़ी है।

१—डीठी = ढिठाई। २—ढिग ढकि है = निकट बैठैगी।

'आलम' सुआली वनमाली देखि चलि दुति,
सुगढ़ कनक की सी रूप गुन गाढ़ी है।
देह की झनक वाकी चीर में चमक छाई,
छीरनिधि मथि किधौं चांद चीरि काढ़ी है ॥८६॥

ऐसें कैसे कहौं ऐसी और नीकी नारि ना पै,
नीके कै निहारे अति नीकी करि जानिहौ।
'आलम' सुकवि हम कहा पहिचानैं नाथ,
परख तुम्हैं हौ सब बातनि की खानि हौ।
जामिनी में जात सब कुंज में उज्यारी होति,
दामिनी कहोगे कहे कामिनी न मानिहौ।
सनमुख ह्वै सौंहें डीठि ठहराति नहीं,
डीठि परे पीठि दए आंखिन में आनिहौ ॥८७॥

अंग अंग जगै जोति जोन्ह सी उज्यारी होति,
उजरी उज्यारी प्यारी मानो चंद जैसी है।
'आलम' कहै हो मन मन लौं यहै ये बात,
रूप की निकाई ताकी तहां लगि तैसी है।
और की पठाई हौं सो आवति हौं रावरे पै,
वा दिन की कुंज कोऊ औरो नारि ऐसी है।
वही भूली औरो भूली सब सुधि बुधि वाहि,
हौं तो देखि रीझी तुम देख्यो कान्ह कैसी है ॥८८॥

काम केलि बेलि सी अकेली कुंज धाम खरी,
बदन की आभा जनु फूलतु कमल है।

कहि कवि 'आलम' जगमगत अंग याके,
रवि के किरनि मिलि कदली को दलु[1] है।
चाँद सो चमकि उठो दामिनी सी चमकति,
व्रज की भामिनी किधौं रंभा[2] कैनो छलु है।
रूप की निकाई देखि हौं तो आई धाई कान्ह,
ऐसी जुवती के पाएँ जीतव[3] को फलु है ॥६९॥

सची को सरूप लैके सुन्दर सरोज आनि,
सोभा सानि साँचे भरि ससि हू समेत की।
जोबन की जोति अङ्ग मैन की तरंग तैसी,
सोने की सलाका जानु फैली फूलि केतकी।
कहै कवि 'आलम' करति नित चालि[4] आलि,
कैसे जाति बरनी हरनि हरि चेत की।
सादे मोती कंठ सोहैं पंच रङ्ग अङ्ग चारु,
सुरँग तरौटा[5] सोहै सारी सार सेत की ॥७०॥

सारी सेत सोहै नख नूपुर की आभा सेत,
चंद मुख धारे अंग चाँदनी सी चन्द की।
उरज उतंग मानो उमँगो अनंग आवै,
कसि बैठी आँगी उर गाढ़ी जरीबन्द की।

१—दलु = गाभा। २—रंभा = इसी नाम की अप्सरा। ३—जीतब = जीवन, जिंदगी। ४—चालि = चालबाजी। ५—तरौटा = अँतरौटा (अंतरपट) बारीक साड़ी से नीचे पहनने का कपड़ा।

कहै कवि 'आलम' किसोरी वैस गोरी जगी,
जग की उज्यारी प्यारी प्यारे नंद-नन्द की।
सुभर[1] नितंब जंघ रम्भा के से खम्भ चलि,
मन्द मन्द आवै गति मद के गयन्द की ॥७१॥

आठो अंग[2] निपट सुठानि यानि ठानि ठई,
गांठि से कठोर कुच जोवन की ठेंठी[3] है।
गुन की गँभीर अति भारियै जघन जुग,
थोरे ही दिनन गोरी रूप रंग जेठी है।
कहै कवि 'आलम' दिखाइ दुरिजाइ वारि,
घरी घरी मारि मारि मनहि अमेठी है।
सखी सों कहत बात जगमग मुसकाति,
कौल के से पात नैन पातरी अँगेठी[4] है ॥७२॥

सीसफूल सीस धर्यो भाल टीका लाल जर्यो,
कछु सुक्र मंगल में भेदु न विचारिहौ।
बेसरि की चूनी जोति खुटिला की दूनी दुति,
बीरनि[5] के नगनि तरैयाँ ताकि वारिहौ।

१—सुभर = खूब भरे हुए, पीन। २—आठो अंग। यथा:—
दो०—पहिले जोवन, रूप, गुण, सील, प्रेम पहिचान।
कुल, वैभव, भूषण, बहुरि आठौ अंग बखान॥
३—ठेंठी = गांठ। ४—अँगेठी = (अंग + इष्ट) अत्यंत सुन्दर। ५—बीर = कर्णभूषण (ढारें)।

'सेख' कहै स्याम विधु पून्यो को सो देखि मुख,
बुद्धि बिसरैगो बेगि सुधि न सँभारिहौ।
नभ के से नखत दुरैंगे, नहीं न्यारे न्यारे,
दीपक दुराय तब दीपति निहारिहौ ॥ ७३ ॥

देह में चनक[1] सी है लांक[2] हू तनक सी है,
नूपुर झनक सी है महा छबि बढ़ी है।
चाल गति मन्द[3] सो है लागै सुख कन्द सी है,
निरखे तें चन्द सी है कोककला पढ़ी है।
'आलम' के प्रभु वाके पटतर[4] दीजै कौन,
तेरे चित बसी वहै वाके सम गढ़ी है।
आँगन में पगु भरै सखी कंध बाँह धरै,
कंचन के खंभ, मानो चंप-लता चढ़ी है ॥ ७४ ॥

चंद की मरीचि भरि साँचे ढारी सींचि रस,
कंचन जड़ित, जनु रतन की पाँति है।
भूषण की आभा, अंग सोभा के सुभाइ मिलि,
चाहे[5] चकचौंधे चितु रवि की सी काँति है।
'आलम' सुकवि नेकु छाँह के छुये तें कान्ह,
काम के संताप हू की हाति सीरी साँति है।
बोलति चलति चितवति मुसकाति अति,
रूप की निकाई छवि औरै औरै भाँति है ॥ ७५ ॥

१—चनक = सुन्दर बनावट। २—लांक = कटि। ३—मन्द = शान। (शनि की तरह बहुत मंद गति से चलती है)। ४—पटतर = उपमा। ५—चाहे = देखने से।

मालती की माल सी विमल परिमल[1]-मई,
किसलय कुसुम सुपझिनी की जाति है।
सौंधे भीने छूटे बार भार तिहि अकुलाइ,
डोले भर मोतिन की लर अरसाति है।
कहै कवि 'आलम' कुमारी वृषभान की सु,
ऐसी सुकुमारि देखि छतिया सिराति है।
अलप घर्यहि केलि अलबेली अकुलाइ,
कमल कली ज्यों परसे तें कुम्हिलाति है ॥७६॥

जुवती जहाँ लौं आई छवि उज्यारी छाई,
कुंज है जगमगात जौन्हि कोऊ जानिहै।
मैं हू पहिचानी उन आप पहिचान्यो नहीं,
अजहूँ मनोज हूँ सों नहीं पहिचानि है।
कहै कवि 'आलम' न ऐसी कहूँ देखी सुनी,
रीझि रीझि रहौ कान्ह देखें मनु मानिहै।
सुखही की रासि रसरासि रूपरासि ऐसी,
रोम रोम नख सिख पानिप की खानि है ॥७७॥

ससि है चकोरनि कौं भौरनि कौं कौल-माल,
मृगनि कों नादमई सुन्दरी सुजान है।
केलि कौं कलपतरु सोभा हीं कौं रतिपति,
काम को पियूष पैन काम ही के बान[2] है।

१—परिमलमई = सुगंधयुक्त। २—बान = (वर्ण) रंग।

'आलम' सुकवि पचि[1] रची है बिरंचि ऐसो,
नेक हूँ न देखि लेहु कहा तुमै ज्ञान है।
रति को सुभाउ ऐन मैनका के हाउ भाउ,
रम्भा कैसे रूप सब गुन को निधान है ॥७८॥

बदन बिलोकि साध[2] सुधा की बिबुध करैं,
कुमुदिनि फूली जानि कुमुद को बन्धु[3] है।
चम्पा,[4] सिंह, सारस, करिनि, कोकिला, कदलि,
बीजु, बिंब, लीने सब ही को मन बन्धु है।
'आलम' सुकबि ऐसी कामिनि बिचित्र रचि,
और कों जु रच्यो चाहै तू तौ बिधि अन्धु है।
जैसोऐ गुननि अति आगरी चतुर हरि,
तैसोई सरूप एक सोनो औ सुगन्धु है ॥७९॥

कंचन की बेलि तन बानि[5] सी बढ़त दिन[6],
छिन छिन रूप जोति नैननि समाति है।
भारी सो लगतु हियो ज्यौं ज्यौं उर ऊँचो होतु,
डगनि भरति कटि टूटिबे डराति है।
'आलम' सुकबि हरि मोहति मोहनी है कै,
नेकु तिरछौंहैं चाहि मुरि मुसुकाति है।
बोलत चपल उकै मैनु थकै मैनु थकै,
सोभा की रसाल बाल बरनि न जाति है ॥८०॥

१—पचि = बड़ा उद्योग करके। २—साध = इच्छा। ३—कुमुदबंधु = चन्द्रमा। ४—चंपा ....बिंब = रूपकातिशयोक्ति अलंकार द्वारा इसका अर्थ समझो। ५—बानि = रंग। ६—दिन = प्रतिदिन।

पहिरे कुसुंभी सारी सादी सेत आँगो आँग,
छानी छवि चाहि फेरि छाह हीं चहति है।
चूड़ा पंइ फेरि करि बेसरि सुधारि धरि,
कंकन करनि फिरि मन उमँगति है।
कहि कवि 'आलम' चलति फिरि ठाढ़ी होति,
आलिनु के साथ अलबेल्यो हो करति है।
अलग लग्यो सो लाँकु बोले डग डोलै ऐसे,
डगनि भरति जनु लगसो[1] लफति है ॥८१॥

सुनि चित चाहै जाकी किंकिनी की झनकार,
करत कलासी सोई गति जु विदेह की।
'सेख' भनि आजु है सुफेरि नहिं काल्ह जैसी,
निकसी है राधे की निकाई निधि नेह की।
फूल की सी आभा सब सोभा लै सकेलि धरी,
फूलि पैहै लाल भूलि जैहै सुधि गेह की।
कोटि कवि पचैं[2] तऊ बरनि न पावैं फबि[3],
बेसरि उतारे छवि बेसरि के बेह[4] की ॥८२॥

अलबेली बैस बाल चंबेली की माल गलें,
अलबेली प्रीति पिय रंगीली रँगमगै।
सोने की सी छरी छवि छाजति छबीली तिय,
अंग अंग ठौर ठौर झिलमिली सी लगै।

१—लगसो = लंबी लचकीली बाँस की लोर। २—पचैं = कोशिश करें। ३—फबि = फबन। ४—बेह = (वेध) छेद।

अलबेली बोलनि हँसनि पुनि अलबेली,
अलबेली डोलनि में जोति सी जगमगै।
नैननि में भौंहनि में अधर कपोलनि में,
ऐसो जाको जोबन-जराउ सो जगमगै ॥८३॥

हार हू को भार उर कैहूँ ना सँभारै नारि,
अलप अहार रस बास को अहार है।
सीरें सिथराइ तातें तातीसी ह्वै जाइ डोलै,
पौन के परस प्यारी पान की सी डार है।
कहि कवि 'आलम' न रंभा हू न रति हू मैं,
मैनका[1] घृताची ऐसो रूप को अपार है।
बानक बिचित्र अब चित्रित न होइ ऐसी,
चित्र लिखि पूतरी जिआई करतार है ॥८४॥

बिरही बिलंबि खाँगे[2] बिरह बियोग माँगै,
प्रेमहि प्रतीति है सुनेमहि निबाहि हौ।
'आलम' सनेही ये जु देही के दहे हैं ते तौ,
जोगी जैसें मिले हैं बियोगी जानें ताहि हौ।
कौंधनि सी झाँकि चकचौंधनि लगाई जिन,
काल्हि तें कन्हाई तुम रीझि रहे जाहि हौ।
पून्यो ऐसी आनि घर पैठिहै घरी में बलि,
देहरी दुवार लगि दीपकु न चाहि हौ ॥८५॥

१—मैनका, घृताची = इन्द्रपुरी की अप्सरा विशेष।
२—खाँगे = कम होता जाता है, कृश होता है।

पानिप सों मोती जैसे बहगान थार पर,
तैसेई चपल नैन थिरकनि थोरी है।
बचन के आगें भाइ मोहनि अगाउ आइ,
सजनी समुझि रीझि आप भायें भोरी है[1]।
'आलम' कहै हो बिधि उर तें उतारि आनि,
पान की सो अनी सों उलटि कटि जोरी है।
झीनी आँगी झलकै उरोज को कसाउ कसें,
आवक लगायें पाउँ पावक तें गोरी है ॥८६॥

तरल[2] तुरंग नैना तरुनाई भरि आई,
गोरे मुख सोहै अरुनाई अधरन की।
सरल सुदेस केस तरल तरौना[3] दोऊ,
चलत फलाई नीके ललित करन की।
अमर-मूरति कवि 'आलम' है मेरे जान,
कोऊ अमरावती तें आई अमरनकी[4]।
रंभा ऊ न भावै ऐसे रूप को आरंभ[5] देखि,
सोभित सरीर मधि आभा आभरन की ॥ ८७ ॥

रस भरी रूप भरी सुखद सुबास भरी,
सोभा के सुभाइ भरी पैन मैनका सी है।
दर्पन सी देह ऐसी नेह को नई नवल,
ब्रज में न देखो कोऊ सुरपुरबासी है।

१—आप भाएँ भोरी है = अपनी समझ में भोली भाली है। २—तरल = चंचल। ३—तरौना = कर्णफूल। ४—अमरन की = देवकन्या। ५—आरंभ = प्रथमोत्थान, उठान।

आलम-केलि

'आलम' सुकवि लोनी सोने के सरोजहू तें,
फूल ही के भार[1] भरि-पान की लता सी है।
चंदन चढ़ाये चंद चाँदनी सी छाइ रही,
चन्द्रमा सी मुख छवि हाँसी चन्द्रिका सी है ॥८८॥

ससि तें सरस मुख सारस से राजैं नैन,
जोन्ह तें उजारो रूप रवनि[2] रसाल सी।
रति हू तें नीको प्यारी प्यारे कान्ह जाके पाछे,
बेनी की बनक डोलैं मानो अलि आलसी।
सारी सेत सोहैं कवि 'आलम' बिहारी संग,
चलति बिसद गति आतुर उताल सी।
फूल ही के भार भरि सीस फूल फूलि रहे,
फूली सांझ[3] फूली[4] आवै फूलन की माल सी ॥८९॥

ब्रज की नागरी ब्रजनाथ अति प्रान प्यारी,
चली रूप बनि बनि बासव की बाल[5] सी।
रसिक रवन तजि आरस सरस मति,
रसना[6] की ध्वनि बोलो रसना रसाल सी।
गोरे गात गहनो जराउ को जगमगत,
ऐसी कवि 'आलम' है जोवन-सु-भा* लसी।
दीपति नवीन नग पाँति पट झीने मानो,
कंचन के खंभ में दिपति दीप माल सी ॥९०॥

१—भार = वजन, बोझ। २—रवनि = (रमणी) स्त्री। ३—फूली साँझ = संध्या समय। ४—फूली = अति हर्षित। ५—बासव की बाल = बीरबहूटी। ६—रसना = किंकिणी। * —सुभा = सुंदर द्युति।

मृग मद पोति भाँपी नीलंबर तऊ जोति,
धूम उरभाई मानो छोरी की सी भारी[1] है ।
लै चली हौं अँधियारी अंग अंग छबि न्यारी,
आरसी मैं दीप की सी दीपति पसारी है ।
ऊजरो सिंगार 'सेख' जोन्ह हू को साजु कीनौ,
जोन्ह हू में जोन्ह सी लसै सुधा सुधारी है ।
बार बार कहत हौं प्यारी कों छपाइ ल्याउं,
कैसें कै छपाऊं परछाहियो उज्यारी है ।९१॥

१ थोरे भाइ रीभि राचे प्रेम प्रीति पूरी साँचे,
ऐसे रिभवार को गिराइ गई गैन[2] ही ।
प्रोढ़ा नहीं प्यारी सो नवोढ़ा अलबेली जानि,
खेलों एक संग ते सहेलियो कहै नहीं ।
थोरी बाहु 'सेख' भनि पीरे पीरे होहु जनि,
बिरहु को भेदी[3] वाके भूलि हू भिदै नहीं ।
बैन ही मैं कालि कछू मैन की सी मूरि डारी,
मैन[4] ही के रावरे सुनाउँ नाते मैं नहीं ॥९२॥

१—भारी = लौ, लपट । मिलाओ = "जाके तन की छाहँ ढिग जोन्ह छाहँ सी होत" । (बिहारी) । २—गैन = (गमन) चाल । ३—भेदी = फाड़ में छेद करने का बर्मा । ४—आप भी मोम (मैन) के बने हुए हैं । तममें तनक भी मैं (खुदारी) नहीं है ।

अँखियन लागी ढरौ तब लगि फेरौ करौ,
तेरौ मनु माने तब मेरौ यहै काजु है।
सजनी बुलाई सब सौंज लेन धाई तब,
सौंहैं करौं साजन समीप ही को साजु है।
कालि झुकि[1] बैठी आजु हँसि घर पैठी, मिटो
मान मद, भयो वाके मदन को राजु है।
सीझौ[2] वहै बात जाते रात पीरे गात भये,
खीझौ नहीं कान्ह तुम्हें रीझौ यह आजु है ॥६३॥

रस में बिरस जानि कैसे बसि कीजै आनि,
हाहा करि मोसौं अब बोलि हौं तौ लरौंगी।
औरनि के आधे नाउँ आधी रैनि दौरि जाउँ,
राधा जू के संग पै न आधो डग भरौंगी।
'सेख' होत न्यारे ऐसी पीर लाये प्यारे तुम,
अबहीं हौं बिरह बखाने पीर हरौंगी।
आज हू न ऐहै कोऊ कालि चलि जैहै सौंहैं,
परौं[3] लगि हौं ही वाके पाय जाय पारौंगी ॥६४॥

निझुकनि रैनि झुकी बादर ऊ झुकि आये,
देख्यौ कहौं झिल्लिनि की झाँई[4] झहनाति है।
पानी ते न पैंडो[5] बूझै पानि पसर्यो न सूझै,
काजर सी आजु की अँध्यारी कारी राति है।

१—झुकि बैठी = नाराज़ हो गई। २—सीझौ = पूरी हुई। ३—परौं = परसों।
४—झाँई = झनकार। ५—पैंडो = मार्ग।

प्यारी पै पठावत न मेरी पीर पावत हौ,
प्यारी तौ तिहारी पिय तुम हौं पत्याति है।
देह काँपै देखें द्वार गेह छाँड़ि पती बार
मिहरी[1] की जाति कोऊ दिहरी लौं जाति है ॥९५॥

जाकी बात रात कही सो मैं जात आजु लही,
मो तन तिरोछे हँसि हेरि सुख दियो है।
ऐसे देखी आन कोऊ सो न देखी आन[2] तुम,
वाके देखे मानस मरू कै[3] कोऊ जियो है।
कै तो कहूँ बीधो[4] उर बेधिवे को ठौर नहीं,
'सेख' ऐसो रावरे कठोर मन कियो है।
पीरो नहीं प्रेम पीर सीरो न सिथिल भयो,
चीरो नहीं चितु या सु हीरो है कि हियो है ॥९६॥

मोती कैसी ढरनि ढरकि आवै नैना नेकु,
तुमें ढौरी[5] लागी जानो गौरी ढरि आई है।
'सेख' भनि ताको हाय हाय करौं पाय परौं,
आय बाय ऐसी जीय कैसे करि आई है।
नेहु नहीं नैननि सनेहु नहीं मन माहिं,
देह नहीं बिकल बियोग जरि आई है।
झूठे ही कहतु परबस मख्यो जातु हौं सु,
पर बस नहीं परबस बरिआई है ॥९७॥

१—मिहरी = स्त्री। २—आन = आनबान। ३—मरू कै = मुश्किल से। ४—बीधो = अटका है। ५—ढौरी = बानि, आदत।

भोरी घैस राची जिनि भुरये हौ साँचो नहीं,
काँची प्रीति जानौ, जहाँ कहूँ नैना लागे हैं।
'आलम' सनेही ते वे पैंड़े मैं न वैंड़े होहिं,
पेम पैंड़े आये पैंड़ वड़े ही सो भागे हैं।
विरहनि वेधे नहीं जानत सनेह सील,
लोनी देह दरसन पल पल जागे हैं।
अजौं मसि भीजी[1] नहीं ऐसी मन वसी बातैं,
बोली ठोली हाँसी के कन्हाई दिन आगे हैं ॥६८॥

जानति हौं तुम आपु आपुने हू हाथ नाहीं,
कछू मन खिन ही मैं खीन ह्वै कै खोयगो।
खरेई निडर बैठे बगर उसाँस लेत,
जानति हौं इन अँसुअनि डहु धोयगो।
रोयबो है कान्ह सुतो सोयबो को नेहु नहीं,
नेमु यहै पेम-पथु आये दुख बोयगो।
आँखिन के आगे तुम लागेई रहत नित,
पाछैं जिन लागो कोऊ लोग लागू[2] होयगो ॥६९॥

मनु मिल्यो जासौं सुपनेहूँ मिलि जैए चलि,
हिये मैं जौ ह्वै है तौ ऽय एतौ कहा हाते की[3]।
'सेख' भनि प्रथम लगनि हिलगाने तन,
तैसो आवै ताँवरि[4] भँवर मद माते की।

१—मसि भीजना = रेख आना। २—लागू = निकट। ३—एतौ कहा हाते को = इतनी दुराघट की। ४—ताँवरि = घुमरी (घूम घूम कर गिर२ पड़ना)

जैसे तुम बिधे ऐसे ग्वारिनि बिधी है कान्ह,
हौं न कहौं बात राखि ठकुर-सोहाते की।
बैननि को मतो बाके मन हू में नाहिनै पै,
कछुक मिताई देखौ नैननि के नाते की ॥१००॥

रहै डीठि कोर ढाँके बहुखो भरोखा झाँकै,
दुहूँ कर कोरो टेकि द्वारो झाँकै दौरि कै।
हुती अलबेली तैसी लगी तलावेली अंग,
नये नेह खेली लाजु हारी तिनु तोरि कै।
'आलम' कहै हो घरी घरी अटा चढ़ि जाय,
चाहै चहूँ ओर पाछे राखै नैना मोरि कै।
नेकु चलै चितै छाहँ ऊभी[1] ह्वै कै ऊभी बांह[2],
बार बार अँगराय आँगुरिनु जोरि कै ॥१०१॥

(विरह वर्णन)

परम भावती तेरी लाल मैं बिकल देखी,
बपु न सँभारै कछु उठि न सकति है।
कीनो कहा मोसों कहो स्याम हौं बलाइ लेउं,
जात धकधकी उर अनल धुकति[3] है।

१—ऊभी ह्वै कै = खड़ी होकर। ऊभी बाँह = बाहँ ऊपर को उठा कर। ३—धुकति है = जलती है।

डारे सीरो नीर होति घीय ज्यौं प्रबल ज्वाल,
    झहर झहर सिर पाँह भभकति है।
एक ई अधार याके हिये है रहत प्रान,
    आटक[1] लगायें मधु कुंज कौं तकति है ॥१०२॥

तीर सो लगै समीर ससि सौं कहति सुर,
    बिधु घनसार भयो सारी भई सार[2] सी।
'आलम' अनंग दाह कीनो है अदाह[3] तन,
    अंगना के अंग अंग तपनि अँगार सी।
दुखनि अड़ार[4] लाय सुखनि बिड़ार जाय,
    मारि मैन डारि दीनी पीरी पीरी डार सी।
अजहूं लौं पाय धारि तोपि लीजै पोपि नारि,
    सोचही के सोक सूखी जैसे जलधार सी ॥१०३॥

ताती होति छाती छिनु जूड़ियौ है जाति कछू,
    ताती सीरी राती पीरी बूझि न परति है।
'आलम' कहै हो कान्ह कौन बिथा जानौं वाकी,
    मौन भई काहू की न कानि हू करति है।
आगि सी झंवाति[5] है जू ओरो सी बिलाति है जू,
    छिनु हू न देखे सुधि बुधि बिसरति है।
अँसुवनि भीजै औ पसीजै त्यौं त्यौं छीजै बाल,
    सोने ऐसी लोनी देह लोन ज्यौं गरति है ॥१०४॥

१—आटक = टकटकी। २—सार = लोहा। ३—अदाह = (आदग्ध) पूर्णरीति से दग्ध। ४—अड़ार = समूह। ५—झँवाति है = बुझती है।

बेगि ब्रजराज तजि काज नेकु चलि तहाँ,
जहाँ बैठी प्यारी है सकल सुख दैन की।
'आलम' चकोर बिन चंद की चमक ऐसो,
चकित ह्वै रहै नहीं आवै बात चैन की।
सेज पर अँसुवनि सानि कै सुमन सब,
सैनन सुनावै सु सकति नहीं बैन की।
राति सिसिराति[1] न सिराति[2] सु सुरतिहीन,
सारस बदनि सु सताई अति मैन की ॥१०५॥

बिथा को बिचारु कै सकानी हू न जान्यो नेकु,
पीरी होति जाति अरु तातो सीरो गातु है।
सुमन सुहाते तें तो हिये हूँ ते हाते[3] करि,
नैननि सों चाँद नेकु हेरे न हितातु[4] है।
तुम्हरे बियोग कवि 'आलम' बिरह बढ्यो,
तुम बिनु प्यारे हरि कछु न बसातु है।
आइ[5] हू को ओर आये ऐसी गति होति भई,
ओरती[6] से नैना आँसु ओरो सो ओरातु* है॥१०६॥

१—सिसिराति = सरदी बढ़ती जाती है। २—सिरात = बीतती है। ३—हिये हू तें हाते करि = हृदय से त्याग दिये हैं। ४—हितात है = अच्छा लगता है। ५—आइ = आयु। ६—ओरती = ओलती। * ओरातु है = खतम हुआ जाता है।

अंचर की ओट कै कै कोटनि की ओट कीन्हें,
परत फफोट[1] हैं बयारि लागे बन की।
मलय कपूर आनि राजिव के रस सानि,
नेकहू के लागें अति जागै आगि तन की।
'आलम' सुकवि कहै बावरी ह्वै मौंगि[2] रहै,
हाइ हाइ कछू पीर पायो वाके मन की।
हम सब जतनु जुगति करि हारीं अब,
तुम हीं कहो सुनाय जतन जियन की ॥१०७॥

अनंगु दहतु याकों अँगन सहन दुख,
अँगनहिं सीरी करी अँगनहिं आइ कै।
फूल जलु चन्दनु समीरहुँ न सीरी होति,
अतिहिं तपति थकीं सकल उपाइ कै।
कहि कवि 'आलम' न डोलै औ न बोलै बाल,
नैन आँसू धार ढरै बैठी मुरझाइ कै।
मानो बिनु नीरहिं अधार[3] बेलि ढोली जाति,
फटिक सलाका दुहूं[4] राखी टेक लाइ कै ॥१०८॥

बैननि संतोपे श्रौन, नास घान हूँ अघानी,
अति हूँ अनूप ओप रूप तोपे नैन द्वै।
अधर मधुर परसत रसना सरस,
काम केलि मिलि सुख साँचे अंग अंग छ्वै।

१—फफोट = फफोले। २—मौंगि रहै = चुप हो जाती है। ३—मानो .... जाति = मानो बिना निरवलंब आधार के कोई लता गिरी जाती है। ४—दुहूं = दोनों ओर।

अब कवि 'आलम' बिछोहे छिनु छिनु तिय,
पिय पीय कहि कहि कहै कहो कहाँ स्वै ।
सुरति समानी मन मनहीं मैं देखि बोलै,
मोरे जान पाँचहू समाने पाँच रूप है ॥१०९॥

पिय जक लागे हूँ बिकल थकि थकि जाइ,
पूछे हूँ न कहै कछु काम छाया है छली ।
'आलम' सुकबि लोग कहत मरूरै औरै,
अति कै मरूरै काम डरी मरी है अली ।
जेतो उपचारु कीजै तोतोई बिकारु होतु,
जानि ऐसी बात हौं तो प्यारे तुम पै चली ।
चन्दन चुवाये नलिनी को रसु नाये आँगु,
पानी पाये जैसे प्रजरति चूने की कली ॥११०॥

अटा चढ़ी हुती बिधु छटा सी छबीली प्यारी,
उझकि झरोखा तुम कान्ह ठाढ़े हे[1] कहूँ ।
उतहीं गिरी ही[2] वैसी जौ न आली आनि लागै,
जीवन की औधि ही[3] सु वैसी टरी टेक हूँ ।
'आलम' मयंक पूरो परिवा सो है गयौ है,
कुहू जौ न परै तौ रहो ही कला एक हूँ ।
पतियै भई तें अब जौ न बेगि ऐहौ प्यारे,
पहो निरदई तोहि दया नहीं नेक हूँ ॥१११॥

१—हे = थे। २—३—ही = थी।

जरीयै रटति ताकी जरी[1] न जुरति कहूँ,
जड़ ह्वै रहति फिरि जूड़ियौ कहति है।
'आलम' सुकवि सुधि एकौ न परत कान्ह,
देहहिं विकल किधौं बिरह दहति है।
सेज तें परति भूमि बैठे तें उठति पुनि,
ऐसे बहराइ तब पीयहिं चहति है।
उलटि पलटि लोटि लटकि लपटि जाति,
चटपटी लागै खटपाटियै गहति है ॥११२॥

जाख्यो जु मनोज सिव तीजे नैन ज्वाला करि,
वहै जोर जुर आयो तेही ज्वाल जरी है।
बिरह अपार ताकी पीर को न पार पाइो,
पीर के उपाइ बिनु पोढ़े पास[2] परी है।
एते पर 'आलम' बसंत यह बैरी भयो,
बिस सी बयारि लागै ते ही बिस भरी है।
कीर की कलह कलमल्यो मनु कोकिला हू,
कुहकि कुहकि कान कलकान[3] करी है ॥११३॥

प्रीति की परनि बैरी बिरह की जोति भई,
हारे सब जतन जहाँ लौं जानियत है।
बेदन घटै न बिघटी सी बहै जाति 'सेख'
आन आन भाँति उपचार आनियत है।

१--जरी = जड़ी, बूटी, औषध। २--पोढ़े पास परी है = बड़ी दृढ़ फाँस में पड़ी है। ३--कलकान = परेशान।

जन्त्र है न जरी कछु मरी जाति कन्त बिनु,
नेह निरमोही के न मन्त्र मानियत है।
चन्दन चितैए वरै चाँदनी न चाहो परैं,
चन्दा हू की ओट को चँदोवा तानियत है ॥११४॥

सीतल पनारी[1] जानि डारी पंच नारिन मैं,
पानी की पनारी[2] चहूँ ओर भरी पूरि है।
ओस मैं पसारि कै उसीर आनी सीरी करि,
तैसियै तुषार घनसार हू की धूरि है।
'आलम' कहै हो पहू जतन जुड़ै ना बाल,
जीय की कठिन जीबो जुवती पै दूरि है।
आस यहै एक है उसाँस जा न रुँधै छिनु,
नेहु के निबाहिबे कौं आहि[3] बड़ी मूरि है ॥११५॥

इहाँ तो ठकुरई है अबै नहीं और बार,
रावरे जु आपने सुभाइ कौहूँ आइहौ।
'सेख' कहै उनके तो उमै रहे नैन भरि,
मोहिं फेरि मोहन बिलंब दरसाइहौ।
अब न चले तौ फिरि चलि न सकौगे उन,
अँसुवन कान्ह कहूँ ठाहर[4] न पाइहौ।
आइ घर राखौ बैठि धरनि कौं घेरि नातो.
घरिक में हरि घरनाई[5] चढ़ि जाइहौ ॥११६॥

१—पनारी = पौनार (पमनाल) कमलनाल। २—पनारी = नाला ३—आहि = आह, ठंडा सांस। ४—ठाहर = जगह, स्थान। ५—घरनाई = घन्नई, घड़ों की बनी हुई नाव।

तूहूँ आई हौं हूँ आई याही दौरि आवति है,
ताकी कौन गति जाके जरे जीय जरियै ।
मूरि कौं गई ते आई तेऊ इतही कौं धाई,
जान्यो बैरि बिरह बिरोधै जाहि डरियै ।
एतौ धीरें धीरें देहें बनै बागे बीर जैसे,
ढोले पाँइ धारत उपाइ कौन करियै ।
देखे दुख तीय के बिसेषै मरिबो है माई,
लेखे[1] नाहीं पीय के परेखें[2] याहि मरियै ॥११७॥

जीय की कहै न अनमनियै रहति प्यारी,
मनु ठौरु नाहीं सोई नारि और है भई ।
सुतनु पसीजै उर अँसुवन भीजै छीजै,
कहौ कहा कीजै जानो ठग मूरि है दई ।
'आलम' सुकवि ढिग हँसति सहेलिनि सों,
सपनो सो देख्यो काहू अपनाइ-सी लई ।
बैन की सु-धुनि सुनि नेक ही झरोखा झाँकि,
अकल-बिकल[3] कछू बावरी सी ह्वै गई ॥११८॥

चलहु छबीले पिय छबीली सों प्रीति बढ़े,
उजागर छिपें पाछे दिन को उदोत है ।
सो तिय सताई मैन नैना सित असित ते,
अँसुवा चलत जनु सरिता को सोत है ।

१—लेखे...के = प्रियतम को इस बात का कुछ ध्यान ही नहीं है । २—परेखें याहि = इसी को सोच समझ कर । ३—अकल बिकल = अत्यन्त व्याकुल ।

एती वेर भई मोहिं इत आये मेरी उत,
मनु तुम बिनु तपै तनक न ओत[1] है।
चूनों सो लग्यो है आँग सुनो स्याम बिथा वाकी,
सूनो भौन देखि ताहि दूनो दुख होत है ॥११९॥

अधर अधर बिनु धरे न धरति धीर,
माधौ सुधानिधि वाके प्रान के अधार जू।
बिलपति बाल मु अबल बोलै बोल लाल,
बोलति है बिलखि बिलोकति है बार[2] जू।
'आलम' अलप साँस रही है सरीर सोई,
जतनन सखी राखै कीने सोधि सार[3] जू।
बसन बिसारे बैसी मदन बिसिख बलि,
बिस को लहरि जैसें जाति बिसँभार[4] जू ॥१२०॥

रूठे तें न ठौर छाँड़े उठे न उठाये हठि,
कठिन हठीली अति बैठी निठुराई कै।
कोक की कहानी कहै तासों कहौ कहा कहौं,
'आलम' जु कहि रहै जानि हौं क्रुराई[5] कै।
मेरी न सिखति सिख आपुनी सिखावै सिख,
सखिनु की सिख थकी सिख खों दुराई कै।
तुम हो चतुर चतुरापौ[6] पै तो चातुरी है,
चाहि चित चोरि लेहु एक चतुराई कै ॥१२१॥

१—ओत = आराम। २—बार = द्वार। ३—सार = प्रबंध। ४—जाति बिसँभार = बेहोश हो जाती है। ५—क्रुराई = क्रूरता। ६—चतुरापौ = चतुरपना।

आलम-केलि

कहूँ मोती माँग कहुँ बाजूबन्द झब्बा झरे,
कहूँ हार कंकन हमेल टाँड़[1] टीक[2] है।
ऐसे कै बिसारी स्याम ऐसो बैस ऐसी बाम,
बिहकि पपीहा की सी बार बार पी कहै।
'सेख' प्यारे आजु काल्हि आल चाल देखौ आइ,
छिन छिन जैसी तन-छीजन की छीक[3] है।
सेज-मैन-सारी[4] सी है सारी हूँ बिसारी सी है,
बिरह बिलाति जाति तारे की सी लीक है ॥१२२॥

कीजिये न बार यह बार और बार नहीं,
नेकु बार लागेहू ते बार ते बिसेखिहौ।
खरी है निसाँसी[5] तैं तौ कीनी है बिसासी मारि,
दसई दसा सी लाल भाँति लखि लेखिहौ।
जानत हो लाल जैसे होत हैं हवाल फिरि,
बाल बिसराइबे को रेख आन रेखिहौ।
पावक तैं पावति हौं पाँखुरी सी राखी है मैं,
प्यारे फिरि लागे पल राख आनि देखिहौ ॥१२३॥

पान[6] की सी पान खाये हेम कैसे पानी न्हाये,
पीयूष सो पानु किये पानिप है जो कही।
कोककला की सी कला कोकिला सी कल कुल,
काम की कलोल अरु जैती कला ओक ही।

१—टाँड़ = भुजदंड का आभूषण। २—टीक = गले का आभूषण। ३—छीक = क्षय। —४मैन-सारी = मोम की बनी हुई मोट। ५—निसाँसी = स्वाँस हीन (मुर्दा सी)। ६ —पान की सी = पान की लता सी मुलायम।

'आलम' विचित्र हरि आपु ही रिझाय आई,
आपनी हितू यै जानि आये वाके ओक ही।
लोल लता ललित ललामताई ललिता की,
लाल लालची कै लाई लच अवलोक ही ॥१२४॥

सखी की उक्ति सखी प्रति

नेह सौं निहारै नाहु नेकु आगे कीने बाहु,
छाँहियो छुवत नारि नाहियों करति है।
प्रीतम के पानि पेलि आपनी भुजै सकेलि,
धरकि सकुचि हियो गाढ़ो कै धरति है।
'सेख' कहि आधे बैना बोलि करि नीचे नैना,
हा हा करि मोहन के मनहिं हरति है।
केलि के अरम्भ खिन खेल के बढ़ायवे को,
प्रोढ़ा जो प्रवीन सो नवोढ़ा ह्वै डरति है ॥१२५॥

कौंरे आनि लागे पिछुवारे सखी जागे सौति,
आस पास मौन के उसाँस ही को भरु है।
उन बसि कीने कान्ह देखन न दीने काहू,
मैं हूं बस कैहौं न दिखैहौं कछू डरु है।

१—कौंरे = दरवाजे का एक पल्ला।

'आलम' विचित्र स्याम आये मेरे मया करि,
ओऊ तिया आवौ बैठो उनही को घरु है।
पाये अरु पाये औ छुपाये छतिया लगाये,
काम ते निडर भई अब काको डरु है ॥१२६॥

देख्यो है कन्हाई तब ऐसी ह्वै कै आई तो मैं,
कोटिक उपाय लाय जतननु ज्याई है।
'आलम' कहै हो आजु बैठे ही गिरी ही सुनि,
कहूँ मेरे बैरी आनि बांसुरी बजाई है।
मेरे ऐसी मूरि ही मरी हू जियै छुये छिनु,
मरे ते कठिन यह कैसी मुरछाई है।
मारे डारे बिस ज्यों बिसारे बान मारी जानु,
झारे हू न मानै मानो बारे कारे[1] खाई है ॥१२७॥

आवत ही लखो बाल अतिही बिकल कछू,
तन न सँभारै जानो कान्ह देखि आई है।
बंसी को सबद किधौं बिसको बसेरो 'सेष',
किधौं बाँस बिसअर[2] ताके छौना खाई है।
मोपै मूरी मंत्र हो सजीवन धनन्तर को,
वाहू पढ़ि दीन्हे एक लहरौ न पाई है।
नाँउ सुनि लाल तब मैर सो जगत अब,
रसु सो पियाय केहूँ जतननु ज्याई है ॥१२८॥

१—बारे कारे खाई है=साँप के बच्चे ने काट खाया है।
२—बिसअर=विषधर (सर्प)।

विरह को मूरि जिहि मुरली के मारे माई,
  को न भई जोगिनि वियोगिनी वैरागी है।
एक बरजे तें गई दौरी सुनि बौरी भई,
  ताको बन मेलि मूरि लैन को न भागी है।
पावन दै पीर पेम आवन दे पूरो नेह,
  आजु ही ते जरनि जुन्हैयाहू सों जागी है।
मेरो जो न कह्यो मानै मेरियै बलाय जानै,
  आगिन दै लाइ[1] याहि लागन दै लागी है ॥१२६॥

जड़ी यों जनाई माई किधौं काहू डीठि लाई,
  औचक मिले कन्हाई छतिया धरक तें।
घायल तराइल[2] सी मानो करसाइल[3] सी,
  बार बार बाइल[4] सी घूमति घरिक तें।
लै गई लवाय घरघाली[5] घर घालिबे को,
  हौं न उन्हैं देत होन बाहिर फरिक तें।
दोहनियो डारि सिर मोहनी डराय आई,
  थहर थहर आई काँपत खरिक तें ॥१३०॥

आपुन देही है परदाह को बिलगु मानै,
  जानि बूझि रिझवति या कुबानि रावरी।
'आलम' संताप तन ताके हू तिया को तपै,
  ताके नेकु कान्ह ताको तोहि कहा तावरी।

१—लाय = अग्नि। २—तराइल = (तरल) चंचल।
३—करसाइल = (कृष्णसार) मृग। ४—बाइल = बातुल (जिसे बाई चढ़ी हो)। ५—घरघाली = घरको तबाह करनेवाली।

तरुनी को डग कहा मुनि हो डुलावे सुर,
मुरली के सुनत डुलावे सीस डावरी[1]।
पेम को परोइ[2] लीजै विरह न बोरि दीजै,
नेह को निहोर कीजै छीजै बिनु पाँवरी ॥१३१॥

घरु है कि बनु ह्याँ तौ भूलि परी जनु तेरो,
कहा भयो मनु कहि कौने बसि कीनो है।
जकी सी औ थकी सी है चितवति चकीसी है,
छली है कि छकी है कि काहू कछू दीनो है।
'आलम' विकल बागी[3] मैन को ठगौरी लागी,
नैननि की ढौरी लागी तातैं तनु छीनो है।
यहई सुठौरई है परवस बौरई है,
हौं वहीं सो औरई है जाको नाँउ लीनो है ॥१३२॥

हँसे हँसि देइ बोले बोलै औ न खोलै पेम,
यातैं पहिचानी कछु पीरी पीरी है भई।
'आलम' कहै हो याके हिये की पोढ़ाई देखो,
कैसे कै दुराई माई प्रीति कान्ह सों नई।
अबै अनमनी हुती अँसुवा भरति ठाढ़ी,
औचक ही धाइ धाइ[4] भुज भरि है लई।
पूछे तिहि अँसुवा कहे हो ? कहै कैसे आँसू,
पलकैं पसारि दई पुतरीनु पी गई ॥१३३॥

१—डावरी = छोकरी (नवोढ़ा)। २—परोय लीजै = मान लेना चाहिये। ३—बागी = घूमती फिरती है। ४—धाइ = दूध पिलानेवाली।

फूली साँझ[1] के सिंगार सूही[2] सारी जूही हार,
सोनो सों लपेटे गोरी गौने की सी आई है।
'आलम' न फेरफन्द[3] जानत ही चंदमुखी,
नन्द भौन दीपक जगाइबे को ल्याई है।
जोति सों जुरति जोति आगे नैना जुरे जाइ,
चातुरी अचेत भई चितयो कन्हाई है।
याती रही हाती[4] रसमाती छवि छाती पूरि,
पाँगुरी भई है मति आँगुरी लगाई है ॥१३४॥

सखिन बुलावै कान्ह मुखहिं न लावै झुकि,
दूतियौ निकारी वीनि बेगि ही बगर तें।
हौं न भई हाती[5] कहाँ वाही को सुहाती ऐसी,
मान रस माती हौं न बोली डोली डर तें।
जौलों कहूँ मुरली की घोर[6] सुनी कान 'सेख',
घरी ही में देहली दुहेली* भई घर तें।
परी तिहि काल हुती पोरी पोरी थाल जनु,
सोरी भई सुनि छुटि बोरी गई कर तें ॥१३५॥

आन ठौर कान देतीं मनहिं बौराइ लेतीं,
मुरली की धुनि सुनि चितहिं न आनतीं।
कान्ह चितये ते तौ हौं देखि मुसिकानी कत,
भूली तब रूखी है कै त्यों ही त्योरी तानतीं।

१-फूली साँझ = संध्या समय। २-सूही = सुर्ख। ३-फेर, फंद = छल कपट। ४-हाती = अलग, एक तरफ। ५-हाती=अलग। ६-घोर=रसीली ध्वनि। *-दुहेली=कठिन (घर से देहरीतक जाना कठिन हो गया)

'आलम' कहै हो कहूँ ऐसियों बिसासी है री,
जानि[1] बनि भई बात काहू की न मानती।
मोसो मुख मोरि जैहै ओरनि सों जोरि जैहै,
काहे को हौं जोरी नैना जौ हौं ऐसो जानती ॥१३६॥

हियो ना सिराउ बिसराउ न बियोग बरु,
माँगत मरू कै पेम पावक प्रजारी है।
व्याकुल के जीवे कल कीवे की जहाँ लौं मूरि,
बाँसुरी बिहून[2] बिसबेलि कै बिसारी है।
'आलम' रसाल गुन जाके नटसाल भये,
सोई मूलजीवनि सजीवनी हमारी है।
औषद हितावै ताहि बेदन न भावै जाहि,
भौरि छाँड़ि बीर बैद पीर मोहिं प्यारी है ॥१३७॥

काकी लाज काको डरु कौन आपु कैसो घरु,
कौन घरुवसी[3] कछू बात घर की कहै।
साँस लेत हिये में सलाका ऐसी सालति है,
कान्ह चितवनि माई नित चित को दहै।
'आलम' कहै हो परबस न बसात कछू,
भागे हूँ न छुटै दुख अति साथ ही गहै।
पलक ते न्यारी कीनी नींदऊ बिडारि दीनी,
निसि दिन नैननि मैं घेरी बैठोई रहै ॥१३८॥

१—जानि=प्रियतम। २—बिहून=रहित, अजाया। ३—घरवसी=गृहनाथ, पुंश्वली।

निरखैं नियाहैं तेई गोरी हैं कठोरी हम,
चोरी हो मैं चाहैं पतझारी कैसे पात हैं।
'सेख' कहि एक बार कान्हर की खोरि आयें,
ठौर रहे मानसु[1] कठोर सोई गात हैं।
मोहनी से बोल कारे तारनु[2] की डोल मिलौ,
बोल डोल दोऊ बटमारे बात बात हैं।
नैना देखैं स्याम के ते बैना कैसे सुनैं माई,
बैना सुनैं तिन्हैं कैसें नैना देखे जात हैं॥१३९॥

घर देखै बन देखै घरी घरी जाइ देखै,
देखियो करत मनु देखि ना अघानो है।
'आलम' कहै हो अनबोली गैल लागी डोलै,
बोलि कै चितैहै याको चितु ललचानो है।
नेकु नैना फेरि कान्ह सैननि ही हँस्यो तब,
गैन[3] थकि ठौर चकी मैन हनी मानो है।
धमक सी लागी धाइ लाल उठो डर आइ,
चौंकि फिरि चितयो दुसारु सरु[4] जानो है॥१४०॥

मेरो सो न मेरो मनु औरै कछु भयो जनु,
पलकैं न लागैं जागैं नैना औरै हैं भये।
जहाँ हुती तहाँ ठाढ़ी बिरह की पीर बाढ़ी,
मदन की आगि जागी रोम रोम है तये।

१—ठौर रहे मानस = चित्त ठिकाने रहे। २—कारे तारनु की डोल = काली पुतलियों की चंचल चाल। ३—गैन = (गमन) गति, चाल। ४—सरु = (शर) बाण।

'आलम' कहै हौं भूली भोरहू तें भोरे[1] आइ,
द्वारें झूमि झाँकी कान्ह देखि नेकु ही लये।
लटपटी पेचैं लखि चटपटी लागी आँग,
अटपटे आये लाल माँहि लटू कै गये ॥१४१॥

बन सों बनिकै बनवारी ब्रज खोरि आइ,
बाँसुरी बजाई बाँधे बनिता विवेक[2] कै।
सुनि धुनि धाई बसकाम धामकाम तजि,
रीझे प्रभु 'आलम' बिलोके बार[3] एक कै।
उझकि झरोखें फिरि चाहि चली आली घर,
ठगि ठौर कान्ह रहे टेके प्रीति-टेक कै।
भ्रकुटी कुटिल चले लोचन तिरीछे तीखे,
मनु कटि गयो सु-कटाक्ष लागे नेक कै[4] ॥१४२॥

आँगन ही खरी हौं मगन भई छुगुनत[5],
स्याम अंग नीको वाके संग हौं न गौनी मैं।
मनहिं मरोरि तोरि चोरि संग जोरि सखी,
नयो नेहु जोरि सो री गो री खोरि कीनी मैं।

१—भोरे आइ = धोखे से आकर। २—बाँधे बनिता विवेक = स्त्रियों को विवेक बुद्धि को बाँध दिया (विवेक शक्ति मार दी)। ३—बार = बाल। ४—नेक के = तनक से। ५—छुगुनत = विचार करते हुए।

धौरे[1] ही तें धाय धुकि[2] 'आलम' अधीन करि,
हिये धकधकी है न धीरजु है धौनी[3] में ।
अंचल की ओट में दृगंचल लगाइ नेकु,
मोहि गयो मोहि सखी चपल चितौनी में ॥१४३॥

मनु अकुलाय तनु छिनु छिनु जाय जरि,
धनु न सोहाय पनु[4] याही तें न जाइहै ।
चेटकु करत जेतो तिय को मरन तेतो,
लाज को हरन तोलों कोऊ न लजाइहै ।
ता दिन निकुंज ही ते भाजे भोर 'आलम' सु,
मेरे जान चोरि चित अजहूँ भजाइहै ।
राजिव दृगनि तेरे राजत बिलोकि दृग,
रीझि बसि भई खीझि कहूँ न पराइहै ॥१४४॥

खरीयै हुती सु तौ लौं परीयै बिकल कीनी,
मनु हरि लीनो हेरि अब तन लै गयो ।
देख्यो न अघाइ नैन लाइ[5] तन लाइ रही,
बिरह बढ़ाइ आइ जानों बिष दै गयो ।
साँवरे से गात कवि 'आलम' सरोज चख,
अचानक आइ अब आँगन ह्वै कै गयो ।
भोरी करि भोरे मोंह मोरि याही खोरि सखी,
नेकु मुख मोरि कै करोरि[6] जिय लै गयो ॥१४५॥

१—धौरे = निकट । २—धुकि = झपट कर । ३—धौनी = (धमनी) नस । ४—पनु = प्रतिज्ञा । ५—लाइ = अग्नि । ६—करोरि = अच्छी तरह खुरच कर ।

'आलम' कहै हो भूली भोरहू तें भोरे[1] आइ,
द्वारे झूमि झाँकी कान्ह देखि नेकु ही लये।
लटपटी पेचैं लखि चटपटी लागी आँग,
अटपटे आये लाल मोहिं लटू कै गये ॥१४१॥

बन सौं बनिकै बनवारी ब्रज खोरि आइ,
बाँसुरी बजाई बाँधे बनिता विवेक[2] कै।
सुनि धुनि धाई बसकाम धामकाम तजि,
रीझे प्रभु 'आलम' विलोके बार[3] एक कै।
उझकि झरोखें फिरि चाहि चली आली घर,
ठगि ठौर कान्ह रहे टेके प्रीति-टेक कै।
भ्रुकुटी कुटिल चले लोचन तिरीछे तीखे,
मनु कटि गयो सु-कटाच्छ लागे नेक के[4] ॥१४२॥

आँगन ही खरी हौं मगन भई छगुनत[5],
स्याम अंग नीको वाके संग हों न गौनी मैं।
मनहिं मरोरि तोरि चोरि संग छोरि सखी,
नयो नेहु जोरि सो री गो री खोरि कौनी मैं।

१—भोरे आइ = धोखे से आकर। २—बाँधे बनिता विवेक = स्त्रियों को विवेक बुद्धि को बाँध दिया (विवेक शक्ति मार दी)। ३—बार = बाल। ४—नेक के = तनक से। ५—छगुनत = विचार करते हुए।

धौरे[१] ही तें धाय धुकि[२] 'आलम' अधीन करि,
हिये धकधकी दै न धीरजु है धौनी[३] में ।
अंचल की ओट मैं दृगंचल लगाइ नेकु,
मोहि गयो मोहि सखी चंचल चितौनी मैं ॥१४३॥

मनु अकुलाय तनु छिनु छिनु जाय जरि,
पनु न सोहाय पनु[४] याही तें न जाइहै ।
चेटकु करत जेतो तिय को मरन तेतो,
लाज को हरन तोसों कोऊ न लजाइहै ।
ता दिन निकुंज ही ते भाजे भोर 'आलम' सु,
मेरे जान चोरि चित अजहूँ भजाइहै ।
राजिव दृगनि तेरे राजत विलोकि दृग,
रीझि बसि भई खीझि कहूँ न पराइहै ॥१४४॥

खरीयै हुती सु तौ जौं खरीयै बिकल कीनी,
मनु हरि लीनो हेरि अब तन लै गयो ।
देख्यो न अघाइ नैन लाइ[५] तन लाइ रही,
बिरह बढ़ाइ आइ जानों बिष दै गयो ।
साँवरे सु गात कवि 'आलम' सरोज चख,
अचानक आइ अब आँगन ह्वै कै गयो ।
भोरी करि भोरै भौंह मोरि याही खोरि सखी,
नेकु मुख मोरि कै करोरि[६] जिय लै गयो ॥१४५॥

१—धौरे = निकट । २—धुकि = झपट कर । ३—धौनी = (धमनी) नस । ४—पनु = प्रतिज्ञा । ५—लाइ = अग्नि । ६—करोरि = अच्छी तरह खुरच कर ।

जब कह्यो देखि मित्र हौं तौ भयो देखि चित्र,
अजहूँ लौं चित की अचेत चतुरई है।
रीझयौं हौं तिहारी इन नैननि की रीझि कौं जु,
कौन मृदु मूरति रिझाय मुरझई है।
घूंघट की ढिग चाँपि भृकुटी उचाइ 'सेख'
मन्द मुसकाइ चपला सी कौंधि गई है।
तुम सोध वाही के सिधारे कुंज सुधापुंज,
मोहिं कान्ह घरी एक पाछे सुधि भई है ॥१४६॥

छीकत हौं गई जु वा साँवरे सौं भेंट भई,
सर की सी दई री सुभाय सौंहें हेरि कै।
'आलम' न नीरो आवै बेनु दूर तें बजावै,
दाधे पर लावै लोनु रह्यो मुख फेरि कै।
मनु संगही लगाय गयो सुधि बिसराय,
गनत न गति गाई ऊँचे सुर टेरि कै।
तब ही तें सुधि नाहीं रही कछू मोहिं माहीं,
नैना ना अनत जाहीं रहे अवसेरि[1] कै ॥१४५॥

चंद को चकोर देखै निसि दिन को न लेखै,
चंद बिन दिन छबि लागति अँध्यारी है।
'आलम' कहै हो आली अलि फूल हेत चलै
कांटे सी कँटीली बेलि ऐसी प्रीति प्यारी है।

१—रहे अवसेरि कै=इंतिजार कर रहे हैं, बाट जोह रहे हैं।

कारो कान्ह कहत गँवारी[1] ऐसी लागति है,
मोहिं वाकी स्यामताई लागति उज्यारी है।
मनकी अटक तहाँ रूप को विचार कहाँ,
रीझिबे को पैंड़ो तहाँ बूझि कछू न्यारी है ॥१४८॥

बैरु करी जिन्ह सौं ते बैरिनि भई हैं ग्वारि,
तिनहि के आगे बात कान्ह की कहति है।
'आलम' सुगाय[2] कोऊ गारि लाय जैहै तब,
उनहि मिलैगी जाय ऐसे उमहति है।
पलकैं उघारे नैना चकि चारो होन ऐसे,
औचक चितै कै फिरि नीचे को नवति है।
वहै जब मनसा में नेकु ठहरैहै फिरि,
डीठ ठहराये घर बाहर चहति[3] है ॥१४९॥

घर बैठे बैरु[4] कीजै ऊतरु[5] बनाइ लीजै,
औरै बतियाँ बनाय उपजैं नई नई।
नेक चाहे मुसकाय बहुरयो न चाह्यो जाय,
पलकैं नवाय लीजै ठग ठगि सी लई।
तब लौं सयानु अभिमानु कवि 'आलम' हो,
जौ लौं आली नेकु खोरि कान्ह की नहीं गई।
वापै सौं न आयो जात कीजतु वाही को भायो,
वा तन चितैये नेकु जनु वाही की भई ॥१५०॥

१—गंवारी = गँवारपन। २—सुगाय = संदेह करके। ३—चहति है = देखती है। ४—बैरु = किसी की निंदामय चर्चा। ५—ऊतरु = जवाब।

कहाँ आई बैरिनि बेसुधिन को सुधि देन,
    सुधि आयें बुधि जाइ सुधि बुधि हरी है।
'आलम' ए आली तू तौ कालि हुतीभली आज,
    लाल की सो लगनि भुलानो बिसँभरी है।
मोहिं देखि मोहन को मुख देखि मोही हौं सु,
    मेहु है कि नेहु देहु दीन खीन धरी है।
बरस सिराने नैना बरखि सिराने नैना,
    गहिली[1] गवाँरि अजौं पहिलियै घरी है ॥१५१॥

निधरक भई अनुगवति[2] है नंद घर,
    और ठौर कहूँ टोहे[3] हू न अहटाति है।
पौरि पाखे पिछवारे कौरे कौरे लागी रहै,
    आँगन देहली याही बीच मँड़राति है।
हरि रस राती 'सेख' नेकहूँ न होइ हाती।
    पेम मद माती न गनति दिन राति है।
जब जब आवति है तब कछू भूलि जाति,
    भूल्यो लेन आवनि है और भूलि जाति है ॥१५२॥

जबहीं जमुन जैहै सुधि बिसराइ पैहै,
    घरो डारि औरनि के संग धाइ आई है।
रोम खरी रोच खरी काँपै थरहरै खरी,
    जड़ ह्वै रहति कछू जूड़ियो जनाई है।

१—गहिली = बावली, उन्मत्त।
२—अनुगवति है = अनुगमन करती है। बार बार जाती है।
३—टोहे हून अहटाति है = ढूंढने से भी नहीं मिलती।

'आलम' कहै हो अबहीं ते रिझवार भई,
दुरै न दुराई मैं तो अब लौं दुराई है।
रूप रस प्यासी भई कान्ह तन डीठि दई,
गागरि भरन गई नैना भरि लाई है ॥१५३॥

ढिग चल्यो आवै अरु ढका[1] देत ढीलो बाहँ,
ढोटा ऐसो ढीठ नहिं पैयत डगर मैं।
नागरी आगरी हम तासौं लँगराई[2] करै,
ऐसो कान्ह नागरु है बसत नगर मैं।
नेकहू न कह्यो करै करै जैसी मन धरै,
'आलम' न काहू डरै देख्यो अचगर[3] मैं।
वहै सुनि पैहै दैहै देहै गारी चारि नेकु,
नूपुरनि वारि[4] नारि नंद के वगर मैं ॥१५४॥

अटकावै मनु सु नटावै तनु टट[5] आवै,
हटक्यों न रहै हारी निपट हटकि कै।
पटकत मटुकी झटकि झटकत पट,
चिपट छुटकि छूटी लट सु-लटकि कै।
'आलम' टिकाये टीठि टिक्यो टोकि टेकि भुज,
टकटको लाई टरि गयो सो सटकि कै।
कटि पीत पट सटकारी साँट कर नट,
चटपटी लाय टरि गयो मो भटकि[6] कै ॥१५५॥

१—ढका = धक्का। २—लँगराई = लंगरपना, ढिठाई। ३—अचगर = शरारत, छेड़ छाड़। ४—नूपुरनि वारि = नूपुरों का बजना रोकले। ५—टट = (तट) निकट। ६—मो भटकि कै = मुझको भटका कर।

बांसुरी बिसद बंसी बट को बसेरो तहाँ,
त्रिविध बयार बन बिसद बहति है।
बरन बिरह कवि 'आलम' बिबिध बर,
बार बैस बूझि मानौं बिरसु गहति है।
बारिज बदनि बिरचौंहैं[1] बैन बानी बाकी,
बिपनु[2] बचन सुनि बिरचि रहति है।
बारक कहत बिलखौंहीं हौंहीं बार भई,
बार बार मोसौं अब बावरी कहति है ॥१५६॥

जिय की कहै न अनमनीयै रहति प्यारी,
मनु ठौर नाहीं सोई नारि औरियै भई।
सुतनु पसीजै उर अँसुवन भीजै छीजै,
कहाँ कहा कीजै जानो ठगमूरी[3] है दई।
'आलम' सुकवि ढिग हँसति सहेलिन सौं,
सपनो सो देख्यो काहू अपनाय सो लई।
बेनु की सुधुनि सुनि नैक ही झरोखा झांकि,
अकल बिकल कछू बावरी सी ह्वै गई ॥१५७॥

गौन के सुनत रही मौन भूली मौन सुधि,
पीरी परि आई थकि थोरी रही हाथ ही।
चौंकति चकति पछिताति मुरझाति तन,
ताही छन आय उर लाय लई नाथ ही।

१—बिरचौंहैं=विरोध में ममय। २—बिपनु-बचन= विपन्न बचन।
३—ठगमूरी है दई=किसी ठग ने कोई वस्तु खिला कर बेहोश कर दिया है।

रही ही नवाय नारि, पूछति पियारे के-सु,
कैसे हूँ कैसे हूँ कै उठाय उत माथ ही ।
मुख तन चितै हरवरे[1] गद्दवरे[2] गरे,
उतरु-उसाँसु आँसु आये एक साथ ही ॥१५८॥

नये नये नेह नये मेह नये नये घन,
नवला नवल नीके पारस परस ही ।
किरच कपूर कर कोरैं[3] बीरी भरि हरि,
कर बीरी देत फरकर[4] उठी रस[5] ही ।
रीझे कवि 'आलम' सुभाय ब्रजराय निसि,
भोर भये ऐसे दृग कोर लौं दरस ही ।
सारस से सर से सरस अरसौंहैं रस,
रसिक रसिक संग जागे रास-रस ही ॥१५९॥

खंडिता वर्णन

रजनी बिहाने[6] उठे दोउ अरसाने आँग,
राधे रति रानी तैसे मोहन मनोज हैं ।
'आलम' कहै हो पल कोरनि कटाच्छ देखि,
भोर हो खुलत मानो राते ई सरोज हैं ।

१—हरवरे = शीघ्रता से । २—गद्दवरे गरे = गद्गद् कंठ से । ३—कोरैं = कोमल । ४—फरकर = फड़क, छक । ५—रस ही = प्यार से । ६—बिहाने = बीतने पर ।

सहज की अरुनाई अरु नीकी तरुनी के,
अधरनि रेख राजै उपमा के चोज हैं।
कुसुम बँधूक की ज्यों लीकैं सोहैं न्यारी पीय,
नैन के परस लागे बरुनी के खोज[1] हैं ॥१६०॥

एक सुनि बोल अनबोले डोले डोले फिरैं,
बाँह की डुलनि मनमोहन डोलाये हैं।
अंतर ही एक हये तंत्री[2] कैसे तंत्र भये,
ऐसे मंत्र काम ल कटाछनि पढाये हैं।
हेरनि अहेरी तेरी गोत को अहीरी तैंरी,
हेरि हेरि मानहु अहेरो करि पाये हैं।
जाके नटसाल[3] ताके कैसे ह्वैहैं हाल ऐसे,
नैना तेरे लाल लाल काके लोहू न्हाये हैं ॥१६१॥

जनम दुहागी[4] जिनि देहरियौ देखी नहीं,
खिन में सोहागी भई ऐसो जाको भागु है।
मेरी हितू कैसोऊ, पिया की हितू चित नहीं,
हौं न ताकी आली जामैं बिरह बिरागु है।
'सेख' प्यारे तेरी गति कहत न बनि आवै,
नेकु न्यारे होत हिये दीनो आय दागु है।
अब ही की घरी ऐहै घरी कि पहर ऐहै,
कत पौरी जाति तेरो केतक दुहागु[5] है ॥१६२॥

१—खोज = पद चिन्ह। २—तंत्री = तांत्रिक। ३—नटसाल = कसक पीड़ा। ४—दुहागी = दुर्भाग्यवती। ५—दुहागु = दुर्भाग्य।

सीख सी भुलाई है कि काहू बबराई है कि,
खीझी है परोसिन की ऐसी जुरि धाई है ।
मैं हूँ कहो तै हूँ कहै हा हा चुप कै न रहै,
जोई जोई कही सोइ करिहौं दुहाई है ।
कान्ह सों पिछौड़ी[1] है कि कान्ह की कनौड़ी है कि,
मौड़ी है जु डरपी कै छल अति छाई है ।
साँची कहौं आज तुम पायनि परत कान्ह,
मेरे जान दैया कहूँ ह्वैन देखि आई है ॥१६३॥

तो सी ढीठी निठुर बसीठी देखी मैं न कहूँ,
मीठी मुख आगे पीठि पाछे करै रारि सी ।
मेरे आये मेरी भई वापै याही की है गई,
दई को न डरु लोक-लाज दई डारि सी ।
'आलम' सुकवि आई बातनि रिझाय मनु,
मुरझानो मोहन मुरी है बेझा[2] मारि[1] सी ।
पान सी बनाय सुलझाय हिये लाय इत,
तूं तौ चली नारि फिरि नावक की नारि[3] सी ॥१६४॥

मानस[4] को कहा बसि कीजतु है बावरी सु,
बासी सुरवास हू को बसि कै बसाऊँ री ।
मैनका को स्वामी कामकन्दला को कामी मोरि,[5]
[illegible]

आलम-केलि

'सेख' मनमोहन के मोहन के मंत्र जंत्र,
मोहिं जे न आयें ते विधाता पै न पाऊँ री ।
अस्तनि[1] लेत हाथ चंद्रा चल्यो आवे साथ,
नदिन को नीर बीर उलटि बहाऊँ री ॥१६५॥

प्यार की प्रतीति भये प्रेम को प्रकास रुति,
तातें रस रीति प्रीति प्रगट जनाई है ।
तैं न कह्यो मैं न लह्यो मैन कह्यौ ऐन आनि,
बैनन की रीति सब नैननि में पाई है ।
कंप थंभ स्वेद कछु मोंहनि में भेद मानो,
नेह को नवेद[2] दै कै लालन पठाई है ।
चाली कछु औरै तैं उताली बनमाली कह्यौ,
तोहि बनमाल सौंहैं आली बनि आई है ॥१६६॥

दीरघ ढरारे से वै डोलैं मतवारे से वै,
कारे कारे तारे मानो मलिन अलिन के ।
आये अरसात से सुफूले मुसकात से,
पै राते राते रेखैं छाँड़े अरुन कलिन के ।
'आलम' अलोल दिये केलि के कलोल भरे,
मानो दीप दीपत न कज्जल मलिन के ।
मोहन प्रतच्छ पिय दच्छन सुलच्छन से,
आली तेरे चच्छुनि में लच्छन नलिन[3] के ॥१६७॥

१—अस्तनि = मंत्रास्त्र । २—नवेद = (फारसी) निमंत्रण ।
३—नलिन = कमल ।

गहरु[1] करत कत गवनो हो गिरिधर,
रीझी हौं तिहारी सौं कहति गजगामिनी।
भली कीनी भोर भये हौं न भूली चतुराई,
राखे भोरा भोर लगु कौन ऐसो भामिनी।
कैसे तन बने पट लसत कपोल नख,
हँसत दसन दुति दमकै ज्यौं दामिनी।
मरगजे[2] वागे[3] रस पागे नैना लागे आवैं,
आगे रही पाग घँसि जागे लाल जामिनी ॥१६८॥

नींद छाये रैन के उनींदे दृग मूँदे आवैं,
नींद के आरस इंदीवर निदरत हौ।
पियरो वदन भयो हियरो छुवत मोहिं,
सियरो लगत ज्यौं ज्यौं नियरो करतु हौ।
'आलम' सु प्यारी जिहि ऐसे कै पठाये पिय,
जाके दिन प्रति उठि पगनि ढरत हौ।
कच मुकुराये[4] मधुकर कीसी माल लाल,
मुकर विलोको कत मुकरे[5] परत हौ ॥१६९॥

खरी अनखात ह्वैहै बीरियो न खात ह्वैहै,
झाँकि झाँकि जात ह्वैहै नेक भये न्यारे हौ।
'सेख' कहै उनही मिलाइ पठये हो पिय,
झाँकी दैन आये तुम हिये झुकि हारे हौ।

१—गहरु = देर। २—मरगजे = मलगज (शिकन पड़ा हुआ।)
३—बागा = जामा। ४—मुकुराये = छिटके हुए। ५—मुकरे परत हौ = इनकार करते हो।

बोलो ताहि सौं हो सौंहैं जोरै कौन भौंहैं ऐसे,
पाय परो वाके जाके पाँय पर वारे हौ।
प्यारी कही ताही सौं जु रावरे सौं प्यारे कहै,
आजु कालि रावरे परोसिनि के प्यारे हौ ॥१७०॥

कै रहैंगी रोस वै जु कौहर सी कौंवरी हैं,
ऐसो कोरा छाँड़ि कत भोराभोर आये हौ।
'सेख' निसि जागे के निमेष आवैं लागे, जिहि
राग अनुरागे ऐसी भाँति ताहि भाये हौ।
पाछिलियो जानि पहिचानि ही सु नाहीं जनु,
हा हा छलु छाँड़ौ पिय पाट परो पाये हौ।
लटकि लटकि लटकन भये हिये लागि,
लटू कहूँ और मोसौं लाट पाट लाये हौ ॥१७१॥

लाये सौंरी देह इत चिकने सनेह चित,
पानी कैसी बूँद ऐन बैन ठहरात हौ।
'आलम' अन्यारे नैना काहू के अनंग आनि,
रोष धरे नैननि लखे न नैन जात हौ।
लोभी रस लच्छ ऐसे दच्छन के बंचिये जू,
लच्छन सदोष लाये आये अरसात हौ।
डोले डोले बोलौ बैन जी परते डोलति हैं,
पी पर तिया ते भये पीपर के पात हौ ॥१७२॥

ढीली ढीली डगैं भरो ढीली पाग ढरि रही,
ढरे से परत ऐसे कौन पर ढहे हौ।

गाढ़े जु हिया के पिय ऐसी कौन गाढ़ी तिय,
गाढ़ो गाढ़ो भुजनि सों गाढ़े गाढ़े गहे हो ।
लाल लाल लोयन उनीदे लागि लागि जात,
साँची कहो 'सेख' प्यारे मैं तो लाल लहे हो ।
रस बरसात सरसात अरसात गात,
आये प्रात कहौ बात रात कहाँ रहे हो ॥१७३॥

भली भई भोर भये पाँव धारे भावते जू,
हम अनभावती हैं भावतिनु भाये हो ।
रोस ह्वै कहत हैं न रिस कीजै रस की सु,
जाके रस रसे तिन बस करि पाये हो ।
ऐसो परिहसु[1] हियो तरकि मरीजै पै न,
'आलम' पतीजै पुनि पिय आनि पाये हो ।
अंग नये चिन्ह रतिरंग न दुरत नयो,
आँगन में अंग संग अंगना लै आये हो ॥१७४॥

जम सी जुन्हैया जरौं जागत जु जाय निसु,
जामिनी के जाम जिमि जात जमजाल से ।
आलियो न, और अकुलाइहौं अकेली अब,
'आलम' प आली काहू आली पै हैं आलसे ।
आरसी लै देखो अरसौंहैं हो रसिक रस—
मसे धसे सीस केस भेस अलिमाल से ।

१—परिहसु = खेद, शोक ।

अधर ललित लाल भाल लाल पाग, लोल,
लाल लाल नैना लाल लालची गुलाल से ॥१७५॥

बैन हरि कहे मुरझाइ सैन रही थकि,
गैन[1] ही में नैन उरझाइ कै रिझै गये।
और ही के भोरें आये भोर मेरे भौन कान्ह,
झाँके पीरे सीरे तनु तातो करि तै गये।
रैनि अब आई सुनि रजनी न लागै पल,
रजनी के जागे दिन रैन जाग दै गये।
खुले पल कोरनि तें तामरस भोर ऐसे,
आपुन उनीदे आये मेरी नींद लै गये ॥१७६॥

प्रेम-कथन

भली कीनी भावते जू पावँ धारे यहि खोरि,
अनत सिधारे कि बसत याही पुर हो।
ग्वारि काहू गोपिकै धरयो है सब गुनी जानि,
औगुन न जानौं तुम सबनि के गुर हो।

१—गैन = (गति) चाल।

'आलम' कहै हो चख चाहि चितु चोरि लीनो,
नीकी चतुराई कीनी भले जु चतुर हौ।
निकट रहत तुम एती निठुराई गही,
अब हम जाने कान्ह निपट निठुर हौ ॥१७७॥

जोऊ है जानतु जेजे अनदेखें दुख होत,
जमुना ते आवत ही जात देखे जब तें।
भौनु न सुहातु है उसाँसन बिहात दिन,
रतिपति अगिनि दहति तन तब तें।
'आलम' कहै हो प्यारे, काहू की तो पीर बूझो,
दूर ही तें बदन दिखैबो कीजै अब तें।
ऊँचे चितवत नाहीं नीचे मुसक्यात जात,
ऐसी निठुराई कान्ह कौने बदी कब तें ॥१७८॥

आवत परेखो[1] जहाँ जीय की न जानै कोऊ,
जरौ ऐसो ब्रजु तहाँ कैसे करि रहिये।
कालिंदी के कूल तकि कोटि सूल मूल भई,
मुरली की धुनि छिन सुनिये न सहिये।
'आलम' कहै हो कुलकानि गई जाति हई,
बिरह बिकल भई कौलौं बाट बहिये।
कासों कहौं कहै कोऊ पीरौ न बँटावै तातें,
चुप ही भली है कान्ह कछुवै न कहिये ॥१७९॥

१—परेखो = खेद।

औरनि के आगे नाचे और यारिनी सों राचे,
हम सौंहैं नीचो मुख ऊँचो कै दिखाइये।
सूधे करि नैन बोलो बैन आसों बाढ़ै चैन,
मैन के उदोत चारु बाँसुरी बजाइये।
नित ही मिलन कवि 'आलम' हो जी के प्यारे,
मित्त चित पर हित-पतियां लिखाइये।
जासों तैं ठग्यो है मोहिं ताही सों ठगैहौं तोहि,
कौन है ठगौरी तेरी मोहि धौं सिखाइये ॥१८०॥

देखिये न भाखिये न मन ही में राखिये, पै,
आँगन ह्वै जैये बोलो खेलो जासों रसु है।
'आलम' कहै हो कोऊ तन की तपनि हरै,
चितयें सिराइ ताहि यहै बड़ो जसु है।
औरनि की कहा कहौं बहुतन दिय प्यारे,
पीर पर बूझन न इहै परिहसु[1] है।
हौं तो चुप रही जानि इती निठुराई कान्ह,
तेरे जी में बसी है तो मेरो कहा बसु है ॥१८१॥

तू तौ चितै चलि गयो चित हू न कीनी हैहै,
मेरे चित वहै चितवनि भई साल है।
बावरी बिकल चाहि ठगी हौं ठगौरी बाहि,
बैरी बधू बारे मुख यहै बात चाल है।

१—परिहसु = दुःख।

'आलम' कहै हो काहू अयलौं न लागो मन,
लाग्यो तब जान्यो होत ऐसोई जँजाल है।
जापै बीतै सोई जानै कहे कान्ह कौन मानै,
तेरे जी की तुही जानै मेरो ऐसो हाल है ॥१८२॥

जादिन तें तुम चाहे[1] लोग कहैं पीरी काहे,
पीरी न जनैये पल पल जिय जरिये।
'आलम' कहै हो गुरुजन सखी सौति सब,
और बिथा बूझैं जोई कहैं सोई करिये।
घूँघट की ओट आँसू घूँटिबो करत मैना,
उमँगि उसाँस कौलों धीरज यों धरिये।
याको मरियतु है जु ऐसे हँसि बोलो कान्ह,
ऐसी मया करिये तो ऐसे काहे मरिये ॥१८३॥

जैसे डोलै पीरो पात लागे बात ही की बात,
ऐसो तनु डोलै अरु ऐसोई बरनु[2] है।
तेरी ग्वाली ऐसी भई पहो कान्ह निरदई,
तेरे प्रेम परें भयो फाँसी को परनु है।
सूधे रहि सूधे हेरि दीठि नेक हू न फेरि,
नेकु अनजोरे नैना जीय को जरनु है।
मनहि मरोरि मुरि मुसकाय ढोटा तें तो,
मुख मोख्यो सो तो यामें और को मरनु है ॥१८४॥

१—तुम चाहे=तुम को देखा। २—बरनु=रंग।

मया[1] करि चितै चितु चोरि लीनो, हितु करि,
हित बिनु चितै, नहीं सोई सोच नित हैं।
'आलम' कहै हो पुर बास मैं जो बसी तिन्हैं,
नेसुक[2] न चाउ निसु बासर चकित हैं।
देखे टक लागै अनदेखे पलकौ न लागै,
देखे, अनदेखे नैना निमिष रहित हैं।
सुखी तुम कान्ह हौ जु आन की न चिन्ता हम,
देखेहु दुखित अनदेखे हू दुखित हैं ॥१८५॥

बैना सुनै जरनि श्रवौंको सोऊ सीरी होति,
पावक दहे को तेई थावक[3] अमिय के।
दूरि हो ते दरसि कपूर जनु पूरे पल,
फूल-हू ते कोमल हिताने[4] हार हिय के।
'सेख' कहै प्यारे चित घर के उजारे दिया,
कहूँ कहूँ नैननि के तारे केहू तिय के।
देखे बिन जियैं नहीं, देखे मुख जियैं हम,
तुम चिरंजीवो कान्ह जीव मेरे जिय के ॥१८६॥

कहु न सुहात पै उदास परबस बास,
जाके बस हूजै तासौं जीते हू पै हारिये।
'आलम' कहै हो हम दुहूँ बिधि थकीं कान्ह,
अनदेखे दुख देखें धीरज न धारिये।

१—मया = प्रेम। २—नेसुक = तनक भी। ३—थावक = स्पर्श वाले। ४—हिताने = अच्छे लगे।

कछुयै कहौगे कै अबोले ही रहौगे लाल,
मन के मरोरे[1] कौलों मन हीं में मारिये ।
मोह सों चितैबो कीजै चित हू की चाह कै जू,
मोहनी चितौनि प्यारे मोतन निवारिये ॥१८७॥

तुम निरमोही लोग औरै कछू बूझत हैं,
कहा एती बात को परेखो[2] जिय मानिये ।
भावै सोई आयै जु बियोगी दुख पावै जातें,
परबस भये एती मनहिं न आनिये ।
अब नैना लागे भागे कैसें छुटियत है जू,
पैंड़े के चलत सोई नीके पहिचानिये ।
नैननि के तारे तुम न्यारे कैसे होहु पीय,
पायन की धूरि हमैं दूरि कै न जानिये ॥१८८॥

बैठो कान्ह छिनु हू तो उनहीं को छोह करि,
तनु मनु पनु धनु कीजै नवछावरी ।
नैननि पै है जू प्यारे पैंड़ो करो पाँउ धारि,
पुतरीन प्यारी लगैं पायँनु की पाँवरी[3] ।
'आलम' तिरीछे चाहि हँसि कछु बोले लाल,
ता दिन ते हौं ही छकी छकी डोलौं बावरी ।
मोहिं गये मोहि निरमोही है न आये यह,
मोहनी की खानि मुसुकानि है जु रावरी ॥१८९॥

१—मरोरे = ऐंठ, अभिमान । २—परेखो = दुख । ३—पाँवरी = जूती

नीची डीठि आपु क्यों हूँ ऐसे है दिखैये जू पै,
कैसे हू न देख्यो जाय जेतो सोचु करिये।
मुरली की धुनि सुनि द्वार उझकन[1] काज,
मन के चलत तन हौं मैं काँपि डरिये।
लाजनि की भीर पल पैंडो[2]ऊ न पावैं नैन,
'सेख' धीरे सकुचि बिचारि पाँव धरिये।
कीजै कहा कान्हर, कनौड़ो[3] है कै जीबो नाहीं,
ना तौ एक बास में उसाँस लै लै मरिये॥१६०॥

वंशी

सुर पाये सिर धुनि रहैं सब सुर मुनि,
नर खग गन पल टारे ना टरत हैं।
'आलम' सकल तान-बान मृग मीन बेधे,
ताहू के हिये में जाय बेधोई करत हैं।
बरही मुकुट बंशीधर बनमाल यह,
बाँसुरी सबद सुनि पंगु ह्वै परत हैं।
समुझि सनेही भये सेही[4] किते तेही छिन,
नेकु न बिदेही और देही सो डरत हैं॥१६१॥

१—उझकना = झाँक कर देखना। २—पैंडो = रास्ता। ३—कनौड़ो = एहसान से दबा हुआ। ४—सेही = स्याही नामक जंतु।

बाँसुरी बिसारो ना तो ब्रज ना बसैगो कछू,
बिधि बाँधि बाँसुरीके बस करि दई हैं।
'आलम' कहै हो न्याइ नैन देखे मैन तचै,[1]
कान सुनि कान्ह ऐसे तेई तन तई हैं।
चित अनचेते तुम तातें मुसकात हौ जू,
रीझि मुरझाय कै सु केती गिरि गई हैं।
घूमैं लागे गाँसो सी उसाँसनि की स्वास नहीं,
रावरे को हाँसी है निसाँसी[2] औरे भई हैं ॥१८२॥

जेते सुर लीने उर तेते छेद कीने और,
जेते राग तेते दाग रोम रोम छीजिये।
ताननि के तीखे जनु बाननि चलाइ देति,
चीरि चीरि अंगन तुनीर तनु कीजिये।
अन्तर की सूनी[3] घर सूने करै 'सेख' कहै,
सुनि सुनि सबद बसेरो बन लीजिये।
हम ब्रज बसिहैं तो बाँसुरी न बसै यह,
बाँसुरी बजाय कान्ह हमैं बिदा दीजिये ॥१८३॥

न्यारे रहो प्यारे अंगसंग की सगाई छाँडौ,
औगुन गनैया लोग सौगुन सुगातु[4] हैं।
'आलम' सँयोग बिनु बढ़त बियोग जेतो,
प्रीति पथ कान्ह मनु तेतो ठहरातु है।

१—तचै = संतप्त होता है। २—निसाँसी = स्वांस हीन (मृतवत्)
३—सूनी = खाली। ४—सुगातु है = संदेह करते हैं।

औरनि की ओले[1] अब बोलिहौं न रावरे सौं,
डोलिये न साथ हियो हेरई हेरातु है।
जीजै बिनु बातो चित रातो अनरातो कीजै,
नैननि[2] को नातो पै न हातो कियो जातु है ॥१९४॥

डगरो[3] दै जाहि नट नागर चतुर कवि,
'आलम' बसेरो दूरि जैबो पुर चारि हैं।
लीजै दधि पीजै जान दीजै और काज कीजै,
घाँमे ते पसीजे तनु भीजे पट चारि हैं।
जो रस बिचाखो तुम सो रस न जानै हम,
गोरस लपेटी सब गूजरी गँवारि हैं।
जैसे तुम आछे हौ छबीले छैल तैसी और,
आछी आछी पाछे आवैं रीझो रिझवारि हैं ॥१९५॥

धौरी आवै धौरी कहै धूमरी धूमरि आवै,
ऊँची कै कै पूँछनि बोलावै लाल जाहिनै[4]।
मेढ़ी फैरी काजरी पियरि बौरी भूरी चारु,
बलही मँजीठी बन बेला अवगाहिनै[5]।
मध्य सोहैं स्याम धूर धूसरित भूरी भौहैं,
वलि वलि 'सेख' उपमा मैं देउँ काहिनै[6]।
गोविंद को मनु कछू गायन में रमि रह्यो,
आगे गाय पाछे गाय, गाय बायें दाहिनै ॥१९६॥

१—ओलै = परदे में। २—नैनन...जातु है = देखना तो नहीं रोका जा सकता। ३—डगरो = मार्ग। ४—जाहिनै = जिसको। ५—अवगाहिनै = जानकर। ६—काहिनै = किसको (ये पंजाबी ढंग के रूप हैं)

प्रवत्स्यत्पतिका

धीर तें अधीर भई पीरनीर[1] चीर भीजै,
सोचनि कुचनि पर लोचन बहत हैं।
'आलम' अँदेसे ऐसे कैसे यहि वैस जीजै,
ऐसे उसाँसन प्रान कैसे के रहत हैं।
कहा करौं माई मेरे प्रान मेरे हाथ नाही,
प्रान प्राननाथ साथ चल्योई चहत हैं।
पल न लगत पल कल न परत सुनि,
आली री ललन कालि चलन कहत हैं ॥१९७॥

सेवा सावधान देव चरितन चित राखौ,
कहा भयो कान्ह जु कलेऊ रूँगै[2] खात हैं।
'आलम' ए वै हैं जिन बलि डारि बालि मारि,
रावन के कंध गारि बांधे सिंधु सात हैं॥
बाँभन अक्रूर नन्द जू के दुख दूरि करे,
ए तौ पुनि पूरनु पुराने वेदै पात हैं।
अंच[3] भरे कंचनहिं कीरा कहूं कोरत हैं,
कंटक की कोर कहूं हीरा बेधे जात हैं ॥१९८॥

घरते निकसि घरी एक जो रहत हैं तौ,
घरी सी भरत नेन ऐसे ए अयान हैं।

१—पीर नीर = दुःख के आंसू। २—रूँगें = थोड़ा २ मांग मांग कर।
३—अंच = (कंचन की आंच) अग्नि।

घन लौं पनारत[1] पनारे से ह्वै रहत हैं,
निसि न्यारे नीर नये नारे ज्यौं निदान हैं।
कैसे कवि 'आलम' सँदेसे मधुबन के लै,
फूटे सर छूटे जल धारा मेरे जान हैं।
जब हुते नदी पार आगे सुनौ नैना मेरे,
तब हुते नदी अब समुँद समान हैं ॥१९९॥

भँवरगीत

जाके जोग जुगिया[2] जुगत ही सौं जोग जागैं,
भगन संजोग यसि अलख अलेख है।
सनक सनन्द सनकादि शिव मुनि जन,
सारद नारद हू के लगत निमेष है।
'आलम' सुकवि आनि ब्रज नर भेष धर्यो,
ध्यावत हौं जाको ताके नाहीं रूपरेख है।
निगम तें अगम सुगम करि जान्यो तुम,
निरगुन ब्रह्म सोई सगुन के भेष है ॥२००॥

सोई स्याम सुनहु अगाध के समाधि ध्यावैं,
सोई स्याम रैनि जामैं निलहीं समाति है।
सोई स्याम पलक लगैं तें स्यामताई ही मैं,
तनमय[3] होत तब कत पछिताति है।

१—पनारत=पनारे। २—जुगिया=योगीजन। ३—तनमय=तल्लीन।

'आलम' सुकवि कहै सोइ स्याम घन घन,
तारनु[1] तें न्यारे नहीं कन दिखलाति है।
तुमहीं में स्याम तुम स्याम ही में रमि रही,
यादि ही बिकल बिहवल भई जाति है ॥२०१॥

कर्म को बियापी को है धर्म कै समाधि ध्यावै,
श्रम कै सुनावै सु तौ ब्रह्म ही के नाम को।
कैसो जोग जुगति संजोग कैसो कहा जोग,
ज्ञान हू की गांठि कैसी ध्यानन को धाम को।
'आलम' सुकवि इहां वृन्दावनचंन्द कान्ह,
चित ये चकोर कहौ आन बिसराम को।
जहाँ रस परस सरस मुरली की घोर,
तहाँ ऊधौ सगुन निगुन[2] कौन काम को ॥२०२॥

रुचिर बरन चीर चंदन चरचि, सुचि,
सरद को चन्द चाहि चितहिं धरत हैं।
विविध बिलास बलि रास ब्रजपति प्यारे,
तेई ब्रज बतियां उचित उचरत हैं।
'आलम' सुकवि अब वैसे कान्हं ऐसे भए,
उतहिं लुभाने किधौं इतहिं डरत हैं।
मधुबन बसत मधुर मुरली की धुनि,
मधुप कबहुँ माधौ सुरति करत हैं ॥२०३॥

१—तारनु = नेत्रों की पुतलियां। २—निगुन=निर्गुण।

पतियां पठाये अस्रुपात तौ भलै पै होत,
बतियनि बिरह बितैबो कछू हाँसी है।
'आलम' निरास बैन सुने कौन औरे नैन,
हिये को कठिन ऐसो कौन ब्रजबासी है।
ऊधो ये सँदेसे जैये वाही चितचोर पै लै,
आपुन कठिन भये और को बिसासी है।
यहाँ लौं न आवै नेकु बाँसुरी सुनावै आनि,
बिनसैगो कहा आये जो पै अविनासी है।।२०४।।

अँखियाँ भली जु ऐसे अमुवनि धारैं, नातो
धारा पल छूटे तिहुँ देस न समाति है।
आँधि है जु धूम की उसांस रूँधि राखी है जु,
नेकु लेत चौसहू अँध्यारो¹ होति राति है।
'आलम' संताप स्वेद सींचिबो अधार को हूँ,
झूरी है कै देह फिर खेह ज्यों उडाति है।
छाती पै सराहौं बरु दीया की सी भाँति ऊधौ,
पाती लिखे लेखनी ज्यों बाती बरी जाति है।।२०५।।

तरनिजा तट बंसी-बट कुंज पुंज बीथी,
बन घन जहाँ तहाँ आनँदपयोगी² हैं।
सोई रहै ध्यान ऊधौ ज्ञान को न काज कीजै,
ये तो ब्रजवासी ब्रजराज के वियोगी हैं।

१—अँध्यारो = ध्यानावस्थित दशा। २—आनँदपयोगी = आनंद करने के योग्य।

'आलम' सुकवि कहै तन बीच कान्ह छवि,
जोग दैन आये तुम कहा हम जागी हैं।
जोग तौ सिखैये ताहि जोग की जुगति आनै,
जोग कौ न काज हम बंसीरस भोगी हैं ॥२०६॥

बाँसुरी सबद सिंगीनाद पूरि पूरि रहे,
ताही को अदेस[1] सोई तन मन धुनि है।
बिरह की ज्वाल साधैं साधैं जलु नैननि को,
निद्रा तन भूख साधैं साधैं उनमुनि[2] हैं।
'आलम' सुकवि यहि जुगति जागै सु जोगी,
अलि उपदेस हम सुन्यौ है न सुनि हैं।
सुमिरन मौन उरध ऊरध उसाँस रूँधैं,
जैसें ब्रजबासी ऊधौ ऐसे कहा मुनि हैं ॥२०७॥

चाहती सिंगार तिन्है सिंगी सौं सगाई कहा,
औधि की है आस तौ अधारी[3] कैसें गहिये।
बिरह अगाध तहाँ सुन्नि[4] की समाधि कौन,
जोग काहि भावै जु वियोग दाह दहिये।
'सेख' कहै मैन-मुद्रा मोहन जु लाये बन,
मुद्रा लाओ काननि सुने ई सूल सहिये।
लागै लग[5] नेकहूँ कहूँ जौ बैरी नीरो होय,
ऊधौ एते बीच की बिचारि बात कहिये ॥२०८॥

१—अदेस = आदेश, आज्ञा। २—उनमुनि = योग की एक मुद्रा। ३—अधारी = झोली। ४—सुन्नि = शून्य। ५—लग = लगन।

गाँसी जाहि सूल ताहि हाँसी न हँसाये आवै,
पासी[1] परै पेम सुनि साँसी[2] कहियत है।
मन गये मानस मरूरैं मारि साँस लेत,
परगट नैसकु उदासी कहियतु है।
'सेख' कहै सोई गति हरि बिछुरत ऊधो,
बावरे बिकल ब्रजबासी कहियतु है।
सुर बाँसी[3] बेधत बिसारे सर व्याधि सोई,
तातें बेड़ो अधिक बिसासी कहियतु है ॥२०९॥

वारै[4] तें न पलक लगत बिनु साँवरे ते,
बावरे अजान ऊधौ भले उपदेस हैं।
तादिन ते बन सूनो घर है दहत दूनो,
तारनि[5] में ज्योति नहीं जटा भये केस हैं।
'आलम' बिहान छिन जानो जात कोटि दिन,
कौन रैन की समाई सुरति न नैस[6] हैं।
हम हू ते स्याम दूरि स्याम हू ते हम दूरि,
वै तौ आछे काछे स्याम सखी मैले भेस हैं ॥२१०॥

बूझि कै अबूझ ऊधौ होत ऐसी बूझियै रे,
जो पै ऐसी बूझ तौ अबूझ किन बूझै जू।
झखत झुरत झखकेतऊ खिझावै झुकि,
तुम झुकवत झूठो जूझ कौन जूझै जू।

१—पासी = फांसी। २—साँसी = (साँची) सत्य। ३—बाँसो = बंशी। ४—वारै तें = आरंभ ही से। ५—तारनि = नेत्र की पुतलियां। ६—नैस = तनक।

राजिव नयन मेरे 'आलम' रहे कै ध्यान,
रीझ की रहनि में अबूझ कहा रूझै[1] जू।
प्रगटि जुगति जाहि जोजियतु ऐसी सुनि,
भोग की भुगति पायें जोग काहि सूझै जू ॥२११॥

सबद सुवास रस रूप परसन ही को,
जाहि को न तोप पूजै ताहि को वियोगु है।
एक मग बंचिकै अनेक मग पंच कीने,
पंचसर व्यापत सकल ब्रज लोगु है।
'आलम' सुकवि ऐसी जुगुति लखावैं आपु,
तन को संजोगु कान्ह जोगिनि को जोगु हैं।
अमित अगाध रस भोगिन कौं भोग दीनो,
सुख को संयोग पायें जोग ही में भोगु है ॥२१२॥

जुग है कि जाम ताको मरमु न जाने कोऊ,
बिरही को घरी और प्रेमी को जु पलु है।
"सेख" प्यारे कहियो सँदेसो ऊधो हरि आगे,
ब्रज बारिवे को घरी घरी घृतु जलु है।
हाँसी नहीं नेसकु उकासी[2] देत जोग लग,
बिरह वियोग झार औरै दावानलु है।
सिर[3] सों न सेलै पग पेलै न परे लौं[4] जाय,
गिरि हू ते भारो इहाँ बिरह सवलु है ॥२१३॥

१—रूझै = उलझै। २—उकासी = फुरसत। ३—सिरसों न सेलै = न तो सिर पर भूतसा सवार रहता है। ४—परे लौं = दूर तक।

जोगु दीजै जोगिन संयोगिन को भोगु दीजै,
राज भोग कान्हजी बड़ाई सब दीजिये।
'आलम' अलख ज्ञान मुकुति मुनिंद लेहिं,
देव कविलास[1] बसैं पेमहिं पतीजिये[2]।
रूप रुकुमिनि रमै साईं सत्यभामा के हौं,
कुबजा के परस परेखे कत छीजिये।
बिनती इहाँ की इहै याही बंसीधरजू सों,
हमैं नेकु बाँसुरी बजाइ मया कीजिये ॥२१४॥

वे तौ ऊधौ परम पुनीत पुन्य पाइयत,
भावन प्रबीन प्यारे पावन दरस जू।
गाँव की अहीरी हमैं गोरस की चास भरीं,
खरीये गँवारि गुन रूप हौ न रस जू।
कहे कवि 'आलम' विराजित वै राजा कान्ह,
राजनि के राजा गुन पूरन दरस जू।
बिसरयो बसेरो बन बीथी अरु ब्रजवासी,
अति मन भाई पाई कुबिजा सरस जू ॥२१५॥

सीत रितु भीन भई छाती राती ताती तई,
ऐसे ताप, तिय तन तये हूँ न तवैंगे।
'आलम' अनिल इतराय कै कलिन मिलि,
दीन्हो है कलेस सुधि आये दूनो दवैंगे।

१—कविलास = स्वर्ग लोक। २—पतीजिये = विश्वास कीजिये।

ग्रीपम ते ऊपम है विपम अपाढ़ ऊधौ,
माधो जौ न आये मन भ्रमर ज्यों भवैंगे।
वधिबे को बूँदनि वियोगिनि को बीनि बीनि,
आये बैरी बादर बिलासी बिस बवैंगे ॥२१६॥

पेम नेम गहैं नेह बातें निरबहैं जाते,
अब उन्हैं कहा परी महाराज भये हैं।
कछुक सँदेसे ऊधो मुख के सुनाउ आनि,
हम सुख मानै उन जेते दुख दये हैं।
इहां कवि 'आलम' पुरानी पहिचानि जानि,
जोगी सुधि आये ते वियोगी भूलि गये हैं।
इहाँ बैरी विरह बिहाल करै बार बार,
सालत करेजें नटसाल[1] नित नये हैं ॥२१७॥

जब सुधि आवै तब तन बिनु-सुधि—होत,
बन सुधि आये मन होत पात पात है।
'सेख' कहै सरद सहेट[2] के वे गीत सुनि,
बाँसुरी की धुनि नटसाल गात गात है।
तुम कह्यो मानौ उपदेश हम नाहीं कह्यो,
जैसी एक नाहीं तैसी नाहीं सौक सात है।
पेम सों विरूधौ जिनि हा हा हियो रूँधौ जिनि,
ऊधौ लाख बातनि की सूधी एक बात है ॥२१८॥

१—नटसाल = कसक, पीड़ा। २—सहेट = मिलन स्थान।

भावतो बिदेस जियें भामिनि कवनि भाँति,
भवन न भावे भ्रम भीत न सँभारिये।
'आलम' लगत नहीं पलनि सों पल पल,
प्रलय समान पिय बिनु पल टारिये।
उमड़त जल रही न्यारी है डरारी भारी,
डोलते डगन कहुँ कहो कहाँ डारियें।
हाथहिं कै लीजै लै कै दीजै ब्रजनाथ हाथ,
ऊधौ दोऊ अँखियाँ लै साथ ही सिधारिये ॥२१६॥

उद्धवका लौटना

लीजै छबि जुगति अछूनी छाप प्रानपति,
सरसी हैं पलक पुनीत मेरी जासु है।
'आलम' उन्हें न परतीति और पेम बिनु,
बंसी बिनु और कहूँ ठौर न बिसासु है।
पतिया पठाई तुम बतिया न बूझी उन,
गति और नारि ब्रज और भयो बासु है।
बासर उसाँसनि सों औसरौ न पावे पलु,
निस अँसुवनि सों न नेक हू उकासु[1] है ॥ २२०

१—उकासु = छुट्टी, फुरसत।

मड़हो[1] मलीन कुंज खांखरो[2] खरो ई खीन,
मनु न लगत उदवस[3] लगै आन सो।
बिरह बिकल गोपी डारी हैं वै ठौर ठौर,
मानौ अरसानी आगीं थाकीं करि गान सो।
'आलम' कहै हो जात मनक[4] न सुनी कान,
मेरिये धनक[5] कछू बाला पायो प्रान सो।
दूलह बराती लै कै राति ही सिधारो जैसे,
ऐसो ब्रज देख्यो माधो ब्याह को बिहान सो॥२२१॥

माती मद कोकिल उदासी मधुमास बोलै,
स्वाती रस तपति अबोली रहै चातकी।
'सेख' कहि भौंरा भौंरी फूलनि गुँजारैं पुंज,
छाती तरकति सुनि जुवती घी जात की।
रास रस आवै सुधि सरद सतावै ना नो,
बिरह बसन्त ब्रज घरी घरी घात की।
चितवत चैत की वै चाँदनी अचेत भई,
जोती है जुन्हाई जिन कातिक की रात की ॥२२२॥

जाको प्रात पंकज प्रकासे राते ताते लागैं,
तैसो कुमुदिनि ताहि ताती क्यों हिताति है।
'सेख' कहि जाके बदनोदै में मदन नैन,
साँझहू की लाली में ते आली बिलखाति है।

१—मड़हो = मकान। २—खाँखरो = झांझर (जिसमें बहुत से छेद हों)। ३—उदवस = उजड़ा हुआ। ४—मनक शब्द। ५—धनक = मूल शब्द।

चन्द की उज्यारी ब्रज ऊजर करति जुरि,
दीपक उज्यारी हू ते जरि, जरि जाति हैं।
तरुन वियोग तरुनी को तन तायबे को,
जैसे दिन तरनि तरैया तैसी राति हैं ॥२२३॥

तुम बिनु कान्ह ब्रज नारि मार मारी सु तो,
बिरह बिथा अपार छाती क्यों सिराती हैं।
तरनि सो तमीपति[1] ताही सों तलप[2] तवै,
हेरति ज्यों निसा परी दसौ दिसा ताती हैं।
कानन में जाय नेकु आनन उघारि देत,
ताकी झार फूली डार दूरि तें सुखाती हैं।
वारि में जो बोरो तनु लागति ज्यों चुरै मीन,
वारिज की बेलैं ते बिलोके बरी जाती हैं ॥२२४॥

जसोदा विरह

दान की दहेडी मिस कान्हर की बेर जानि,
देवकी के द्वार है कै कहूँ विधि दीजिये।
तजि सबै नात मात तात की न बात कहैं,
धौंधा[3] धाइयै कहाय कहूँ विधि जीजिये।

१—तमीपति = चन्द्रमा । २—तलप = सेज । ३—धौंधा = धाई ह
गया बच्चे ।

जरि जरि रहै मेरी छाती वरि वरि उठै,
'आलम' छिनहिं छिन छौना बिनु छीजिये।
गहरु न लाउ जिनि मोहिं अकलाउ आउ,
चलहु महर मथुरा ही घर कीजिये ॥२२५॥

कविन को पेम देखि छाती सों लगावैं छौना,
बछरू न देखै तौलों गैया न पेन्हाति है।
चिरिया की चाहि देखि चोंचहू में चारो राखै,
चेटुआ[1] की चाह बिनु सोऊ न अघाति है।
'आलम' कठिन तेरो हियो हों सराहों नन्द,
चन्दहिं पिछौड़ो छाँड़ि लायो कारी राति है।
हम निरमोही मोही बनके पखेरू पसु,
बालक वियोगु कहूँ विपद विहाति है ॥२२६॥

गोपी विरह

हिये हूक हुलसी है, औधि हू न आये हरि,
हेरि मग हारी ताते भई तनु खीनी है।
'आलम' सुकवि थकी विकल बयारि लागे,
मारि मैन सकल सकेलि बिथा दीनी है।

१—चेटुआ = चिड़िया का बचा।

उससि उसाँसन सों पाँसुरी ह्वै न्यारी आई,
बीच बीच आँसुवनि आँखि भर लीनी है।
विरह के बीज बये सलिल सों सींचि दये,
आछी भूमि मानो फामकाछी[1] क्यारी कीनी है॥२२७॥

कंचन में आँच गई चूनो चिनगारी भई,
भूषन भये हैं सब दूषन उतारि लै।
बालम बिदेस ऐसी बैस मैन आगि लागै,
जागि जागि उठै हियो विरह बयारि लै।
अब कत पर घर माँगन है जाति आगि,
आँगन में चाँदु चिनगारी चारि झारि लै।
साँझ भई मौन सँझवाती[2] क्यों न देति है री,
छाती सो छुवाय दिया बाती आनि बारि लै॥२२८॥

जब तें गोपाल मधुवन को सिधारे माई,
मधुवन भयो मधु दानव विषम सों।
'सेख' कहै सारिका सिपंडी पंडरीच सुक,
मिलि कै कलेस कीन्हो कालिन्दी कदम सों।
जामिनी[3] बरन यह जामिनीयो जाम जाम,
बधिवे को जुवति जनावै टेरि जम सों।

१—काछी = एक जाति विशेष जो तरकारी शाक इत्यादि की खेती करती है। २—सँझवाती देना = चिराग जलाना। ३—जामिनी = जमराज की दूती (मौत)

देह करै करठा[1] करेजो लीन्हों चाहति है,
काग भई कोइल कगायो[2] करै हम सों ॥ २२९ ॥

मैन बस कीनी मनभावन न आये याते,
सावन को आवन सुने हू अकुलाति है ।
'आलम' बयारि बरै बिजना की छीजै तनु,
बिजुरी की कौंदनि पसोजि भीजि जाति है ।
थोरैं चीर चोली तनु ढारैं भरैं नैन जल,
थोरे थोरे बादरनि चितै मुरझाति है ।
सीरी ह्वैहै भूमि पियराइ जु रही हो तनु,
सीरी होति ज्यों ज्यों ऋतुसीरी[3] नियराति है॥२३०॥

कारी धार परी कारी कारी घटा जुरि आई,
तैसई तमाल ताल[4] कारे कारे भारे हैं ।
'सेख' कहै साखिन के सिखर सिखर प्रति,
सिखिन[5] के पुंज सुर-सिखर[6] पुकारे हैं ।
निरखि निरखि तेई तरुनि तनेनी* हासी,
जिनके वे निठुर निमोही कंत न्यारे हैं ।
बरषि बरषि जात बरषि सो पल पल,
बूंद बूंद बैरी मानो बिसिख बिसारे हैं ॥२३१॥

१—करठा = अति कालो । २—कगायो करै = कांव २ किया करतो है । ३—ऋतुसीरी = शरदऋतु । ४—ताल = ताड़ वृक्ष । ५—सिखिन = मोर । ६—सुरसिखर = ऊंचे स्वर से । *तनेनी हाँसी = ऐंठ जाती है (जड़वत होती है)

रजनी उज्यारी ह्वै रहति जग या तें नभ,
ज्वाल पुंज अगिनि जरति एते मान है।
सुधाराई सीतल है सुभग सरूप जाको,
सकल संसार जानै सु तौ ससि आन है।
एक परतीति मन आवै कवि 'आलम' सु,
बिनु हरि कछू बिपरीति की उठान है।
बिधु गिलि बैठो सु बदन बिधु चाहै मेरो,
बिधु नहीं आली री बिधुंतु[1] मरै जान है ॥२३२॥

तमीपति तामस[2] तें तमिस्र[3] ह्वै उयो आली,
तियनि बधनि कहँ दूनोई दवतु[4] है।
आपो धरि जातो जो न बेगि बूड़ो बारिनिधि,
बैरी रबि आगें, आगे नीरोई नचतु है।
'आलम' सुकबि राती किरनि सलाका सी है,
राका की डरौंहीं राति कहा धौं स्रवतु है।
चन्द्रिका चितौत तनु चिनगैं उठत हैं री,
चाँदनि न होइ चाँद चूनो सो चवँतु[5] है ॥२३३॥

बिस ज्यों बमत बदै अंतक सों आयो या तें,
कंत बिनु अंतक-दसो[6] को नियरातो है।
राती राजो पाती बन बाती सी बरन लागीं,
बातो काम ताती कै लगाई छेरी छाती है।

१—बिधुंतु = राहु। २—तामस = क्रोध। ३—तमिस्र = क्रुद्ध। ४—दवत है = जलता है। ५—चवँतु है = (चर्वण करता है) चबाता है। ६—अंतक दसा = मृत्यु।

लै लै अलि भूली डारैं फूली अनफूली हू ते,
भूली भूली फूल ही सी नारी मुरझाती हैं ।
जरी जरी रहैं सहैं घरी घरी हरी कहैं,
हरी हरी बेलें देखि मरी मरी जाती हैं ॥२३४॥

फूल फुरमान छाप छपद[1] दुहाई पास,
नूतन सुसाज टेसू तंबू दै परोरी हैं ।
कीर कारकुन पिक बानी चीठी आई जमा,
बिरह बढ़ाई छबि रंयति मरोरी हैं ।
सीतल बयारि बादि मापि रूप लीनो है री,
उपज हमारे हरि ध्यान लु घरो री हैं ।
आयो है बसन्त ब्रज ल्यायो है लिखाइ आली,
जोन्ह कै जलेबदार[2] काम को करोरी[3] है ॥२३५॥

पंकज पटीर[4] देखे दूनी दुख पीर होत,
सीरे हू उसीरनि तें पीर चीर हार की ।
अँवा सो अवास भयो तवा सो तपत तनु,
अति ही तपत लागै भार घनसार की ।
'आलम' सुकवि छिन छिन मुरझानि जाति,
सखिन बिचारि तजी रीति उपचार की ।
मन ही मरूरे मरि रही मन मारि नारि,
एक ही मुरारि बिनु मारी मरैं मार की ॥२३६॥

१—छपद=भौंरा । २—जलेबदार=साहब । ३—करोरी=तहसीलदार । ४—पटीर=(पाटीर) चंदन ।

माधौ बिनु राधिका अधिक आधियो न रही,
हारी हारी रहै आपु जरी खीन खेह[1] में।
पिंजर को झलक झलकै झाँझे अंग बीच,
झुकै मन झूमै तन, झँखै झुरै गेह में।
रती न रकत रह्यो 'आलम' नवति तातें,
भीजोई रहत उर नैननि के मेह में।
सोचनि ससूमनि उसाँसनि सों मरी जाति,
मासक तें मासाऊ न माँस रह्यो देह में ॥२२७॥

उत्तपनि रत[2] रितुपति में सपति अति,
निसिपति-कर उर ताप सी गहति है।
हरि बिनु हर्योई, हरयु हर-हुर[3] हठि,
हौंहीं हारी हेरि सूधो मगु न चहति है।
'आलम' नलिन अरु अलिन परसु अब,
अंगना के अंग जानो अगिनि दहनि है।
कहा कहौं केहि कहौं कोह की कहानी मोहि,
कुहु कुहू कहि कहि कोकिला दहति है ॥२२८॥

बुधि कौन विधि की जु बिधु सों बधावे याके,
बधुनि-बधनि को धौं कब तें चला[4] चली।
माधौ बिन सुनो मधुबन जानि मधु मास,
मो को धौं लै आयो मधुपनि की सेनावली।

१—खेह = धूल। २—उत्तपनि रत = उत्ताप में रत (स्वयं संतप्त)।
३- हरहर = हर से हरा गया (काम) ४—चला = चाल, रीति।

अनल सो अनिल[1] नलिनमाला नल[2] मेयी,
अनिल न लाउ री न लाउ मलया अली।
एक इन अनँग अनेरी[3] दही 'आलम' हो,
दूजें आगि चाँदनी या दाहति भाँती भली ॥२३६॥

पवन वर्णन

बारक जो ब्रजराज ब्रज तज्यो अब अब,
सब मिलि एक बार बैरी भये घरज्यों।
मूरख मयूख-हिम[4] हुमकि हुमकि हनै,
हमहिं ये जानै हिये हौं मैं हिमकर ज्यों।
जलजावली ते ज्वालाजाल जलजाल जरै,
लाल लाल भरि दृग जुग जलधर ज्यों।
एक मनु मारे मैं तो मार ही की मारी मरौं
दूजे मारे मरुत प्रवेश विषधर ज्यों ॥२४०॥

सघन घटा घुमरि जगु रह्यो घन घिरि,
घेरि घहरात जात सिंधु भरि नीर जू।
'आलम' सिखिनि[5] सुनि सबद सुहाये सुर,
बूंदनि के संग बहै सीतल समीर जू।

१—अनिल = पवन। २—नल = नायक की नलिका। ३—अनेरी = व्यर्थ ही। ४—मयूखहिम = चंद्रमा। ५—सिखिनि = मोर।

पवन पियारे ऐसे कहियो सुनाय अब,
हम अबला हैं कैसे धरैं जीय धीर जू।
पल पल प्रान ये तपत पिय पास कौं सु,
पालौ पेम सहि न सकति पल पीर जू ॥२४१॥

सघन अखंड पूरि पंकज पराग पत्र,
अच्छुर मधुप शब्द घंटा झहनातु है।
थिरमि चलत फूली बेलिनि की बास रस,
सुख के सँदेसे लेत सबनि सुहातु है।
'सेख' कहि सीरे सरवरनि के सीर तीर,
पीवत न नीर परसे ते सियरातु है।
आवन बसन्त मन भावन घने जतन,
पवन परेवा मानो पाती लीने जातु है ॥२४२॥

केसा दल डोलैं मूल मंद मंदाकिनी फूल,
एला फूल बेला की सुबास बर बासी है।
सरद की सांझ भई सीरी लागे सोय गई,
साजन सहेट[1] भेंटि उठति उदासी है।
मालती कों मिलि जब मलय कुमार आये,
रेवा रस रोमनि जगाय नींद नासी है।
सखिन सुहेल बरु दच्छिन समीर यह,
बरी पुरवैया बरी बैरिनि बिसासी है ॥२४३॥

१—सहेट = संकेतस्थल।

जमुना-कुंज

अरविंद पुंज गुंज डोर भौंर ही अली,
हलोर ओर थोर ज्यों निसा चलत चंदनी।
निकुंज-फूल मौल बेलि छत्र छांह से धरे,
तटी कलोल कोक पुंज सोक संक दंदनी।
'आलम' कवित्त चित्त रास के बिलास ते,
प्रकास वंदना करी बिलोकि विस्व-वंदनी।
समीर मंद मंद केलि कंद दोष-दंद यों,
अनन्द नन्दनंद के बिराजे हंसनंदनी ॥२४४॥

लता प्रसून डोल बोल कोकिला अलाप केकि,
लोल कोक कंठ त्यों प्रचंड भृंग गुंज की।
समीर बास रास रंग रास के बिलास बास,
पास हंसनन्दिनी हिलोर केलि पुञ्ज की।
'आलम' रसाल बन गान ताल काल सों,
विहंग बाय वेगि चालि चित लाज लुंज की।
सदा बसंत हंस सोक ओक देव लोक ते,
बिलोकि रीझि रही पाँति भाँति सौं निकुंज की॥२४५॥

गंगा वर्णन

जौही भौंह भीजी आँखि ताकि है जु तीजिये सें,
जीवी कहे ज्याइहै अमर पद आइ लै।
अंबर पखारे ते दिगंबर बनैहै तोहि,
छुलक छुआये गज खाल तन छाइ लै।
'सेख' कहे आपी कोऊ जैनी है कि जापी पड़ो,
पापो है तो नीर पैठि नागन लपाय लै।
अंग बोरि गंग में निहंग[1] ह्वै कै बेगि चलि,
आगे-आउ मैल धोइ बैल गैल लाइ लै ॥२३८॥

नीके न्हाइ धोइ धूरि पैठो नेकु बैठो आनि,
धूरि जटि गई धूरजटी[2] लौं भवन में।
पैन्हि पैठो अंबर जु निकस्यौ दिगम्बर ह्वै,
दृग देखो भाल में अचम्भो लाग्यो मन में।
जैसो हर हिमकर धरे त्यौं गरे गरल,
भारी घरु डरु धरु छाँड्यो एक खने में।
देखे दुति ना परत पाप रेते पा परत,
सापरे ते[3] सुरसरि साँप रेंगे तन में ॥२४०॥

१—निहंग = नंगा (शिव)। २—धूरजटी = महादेव। ३—सापरे ते = स्नान करने से।

दीनता

जथा गुन नाम स्याम तथा न सकति मोहि,
　　सुमिरि तथापि कछु कृष्ण कथा कहिये ।
गोकुल की गोपी किथे गाइ किथे ग्वारि किथे,
　　बन की जु लीला यहै घरबानि चहिये ।
कुंजनि के कोट वे जु जमुना के भीट तिनै,
　　पूजिये कैंपिले ह्वै कै कविलास[1] लहिये ।
सेस रेस सोधे देव खोवेनि को मोद है,
　　जो एकौ घरी जनम में घोष[2] माँझ रहिये ॥२४८॥

मिटि गयो मौन पौन साधन की सुधि गई,
　　भूली जोग जुगति बिसार्‌यो तप बन को ।
सैन प्यारे मन को उजारो भयो प्रेम नेम,
　　तिमिर अज्ञान गुन नास्यो बालपन को ।
चरन कमल ही की लोचनि में लोच धरी,
　　रोचन ह्वै राच्यो सोच मिटो धाम धन को ।
सोक लेस नेकु हू कलेस को न लेस रह्यो,
　　सुमिरे श्री गोकलेस[3] गो कलेस मन को ॥२४९॥

पैंड़ो सम सूधो बैंड़ो कठिन किवार द्वार,
　　द्वारपाल नहीं तहाँ सबल भगति है ।

१—कविलास = स्वर्ग ।　२—घोष = अहीरों की बस्ती (ब्रज) ।
३—गोकलेस = गोकुलेश (श्रीकृष्ण) ।

'सेख' भनि तहाँ मेरे त्रिभुवन राय हैं जु,
दीनबन्धु स्वामी सुरपतिन को पति है।
वैरी को न वैरु बरियाई को न परवेस,
हीने को हटक नाहीं छीने को सकति है।
हाथी की हँकार पल पाछे पहुँचत पावै,
चींटी की चिघार पहिले ही पहुँचति है ॥२५०॥

राम किसी भाँति भजि रावन की रीति तजि,
त्रेता ही ते तेरो दिन नीके जिय आनि लै।
'सेख' भनि बापर बहाऊँ कोटि द्वापर जु,
स्वारथ निवारि परमारथ की बानि लै।
सोई दिन सोई रैन सोई ससि सूर गैन,[१]
करु नीको नाम सोई समय में आनि लै।
कलजुग तो पै जौ तूं कलि के कलेस मानै,
सति भाखि सत लिये सतजुग मानि लै ॥२५१॥

सीता सत रखवारे तारा हू के गुन तारे,
तेरे हेत गौतम की तिरिया ऊ तरी है।
हौं हूँ दीनानाथ हौं अनाथ पति साथ बिनु,
सुनत अनाथनि के नाथ सुधि करी है।
डोले सुर आसन दुसासन की ओर देखि,
अंचल के पेचत उघारो औरै धरी है।

१—गैन = गति, चाल।

एक ते अनेक अङ्ग धाई सेत सारी संग,
तरल तरंग भरी गंग सी है ढरी है ॥२५२॥

रजनी को काजु नर द्योस ही ते सोचै बैठ्यो,
द्योस हू के काज को विचार यहै राति है ।
हँसै खेलै खाय न्हाय बौलै डोलै आवै जाय,
मन ही की रुचि नीके तन ही हिताति है ।
'आलम' कहै हो बिनु पूरी गथु पाये ऐसो,
थोरी पूंजी बीच जन्म मोतियो सिराति है ।
घरी है गनतु घरियार ज्यों ज्यों बाजत है,
जानतु है नहीं कि बजाये आयु जाति है ॥२५३॥

जनमत छिति पर्यो पलना बहुरि परि,
हाथी हय सुखासन पर्योई चहतु है ।
अरिनि के ग्रस परि विषयनि बस परि,
जुवतिन रस परि सुखहिं चहतु है ।
तासों तोहि परनि[1] परी है मेरे प्यारे प्रान,
हा हा परकृत[2] छाँड़ि 'आलम' कहतु है ।
प्रनति सरीर सील धरिबे ही पर रुचि,
पर्योई रहतु ता तें पर्योई चहतु है ॥२५४॥

१—परनि परी है = पड़ने की आदत पड़ गई है । २—परकृत = प्रकृति, स्वभाव ।

शिव को कवित्त

गोरख सुद्धोरी लिये संभु ताको मत दिये,
आपुन अकेलो संग गौरी तिहि लोग ना।
घइनी विभूति बार बार लै लै मुख लावै,
उरहू लगावै पुनि भावै कछू भोग ना।
अधारी[1] लै धौरे[2] धरी संपत्ति धतूरा भरी,
वृषभ लै चले जाय कोऊ ताको सोग ना।
जटा छिटकाये छवि छोनो में बिछाये छाल,
बासुकी बिरागी बाकी टेक बैठो जोगना[3] ॥२५५॥

देवी को कवित्त

मौन को दरसे पुन्य-भौन मेरे नेरे आयो,
छत्र-छाँह परसत छत्रनि सों छयो हौं।
मंगला के मंगल तें मंगल अनेग भये,
हिंगलाज राखो लाज याहि काज नयो हौं।
सेषमति 'सेख' ही सुसेष की सो दीनी तुम,
रावरे सिखाये सिख ढिग आनि लयो हौं।

१—अधारी = झोली। २—धौरे = निकट। ३—जोगना = योगी।

दुर्गा देवी जैसें दया सें दुर्ग मति आयौं,
    पारवती तुम्हें सुमिरत पार भयो हौं ॥ ५१५ ॥

रामलीला

पट्टन में पैठनु परोसौ भये पल्लवनि में,
    भाजन के द्वार, नद द्वार परि रहिहैं।
'सैना' भूमि छाजिहैं कि बिन-बेलि छाजिहैं कि,
    छुन हैं कि कौंधि हैं दामिनी भाँति कहिहैं।
पन गिरि बरनि¹ चढ़ेंगे दुख देंगे चढ़ि,
    कोपरें कुमार सुकुमार कैसे रहिहैं।
जैसे नव दल ए कमोल हाथ कमलनि के,
    पनकाम कोटि छोंगि हाथ पाइ रहिहैं ॥ ५१॥

राजा को मरनु बिछुरन रघुनन्दन को,
    कैकई को दुख नहि दुख कैकई को।
सिया की सुरति मृग छिन में मगन भई,
    कुलपति मगन देह नाहिं दुखी भई ही।

1—बरनि = वर्णी।

'सेख' भनि न्यारे होत घर के उज्यारे दिया,
सुधि आये साँस लेत विष सो पियत हौं।
अन्तर मैं जरी नख सिख परजरी नहीं,
तातें अधजरी हौं मैं मरी न जियत हौं ॥२५८॥

जरि उड्यो पौन गौन थाक्यो मौन पंखी भये,
मानस की कौन कहै विथा जु अकथ की।
'सेख' प्यारे राम के वियोग तात प्रात ही ते,
रह्यो मौन मुख सुधि गई ज्ञान गाथ की।
टेकई न प्रान पल, केकई पुकारे ठाढ़ी,
राजा राजा करत भुलानी पानी पथ की।
दरसत दुसह उदासी देस तज़ि गये,
देखी जिन दसई[1] दसा जु दसरथ की ॥२५९॥

ऊंचे चढ़ि देखि तुम नीचेई चलत अव,
चले किन जाहु जु चले हो पार चाउ सों।
जाके पग परस पखान ही को पांख भयो,
पानी ही को डोंगा सु उड़त लागे वाउ सों।
'आलम' कहत रघुनाथ साथ ऊभे[2] हाथ,
केवट कहत टेरि हेरि भय भाउ सों।
नीरे न लै आइहौं जू फेरो करि जाउ अव,
मेरो सब कुटुम जियत याही नाउ सों ॥२६०॥

१—दसई दसा = मरण। २—ऊभे हाथ = हाथ उठाकर।

जुरे जहां महावीर राजन की महा भीर,
महाराज वीर रघुवीर पैज अति की।
'आलम', जनक जानकी की मरजाद राखी,
दीनी पति कीनी छत्र छत्रिनि के छति की।
कर जु करेरे कर उठी है धनुष धुनि,
पारद सुनत सुधि भूली जंत्र जति की।
कुंद के कराक मूंदे लोचन तराक[1] इन्द्र,
गुन के तराक[2] छूटी तारी भृगुपति की ॥२६१॥

पनच पुरानी ढरि पानी सो धनुष आयो,
छुअत छू-टूक भयो तासों कहा करिये।
'आलम' अलप अपराध साध जीय जानि,
छिमा छीन करि कत क्रोध भार भरिये।
द्विज कर सूझियत बूझियो न जूझि बर,
कठिन कुठार आनि कंठ पर धरिये।
गुरु मति लोपिये न पूजा पाय कोपिये न,
तासों दाउ रोपिये न जाके पांउ परिये ॥२६२॥

आयो चिनगी जगाइ लपकि लंगूर लाइ,
उठी है बघूरा की कँगूरा ही सों जागी है।
मरके भवन भहराने भट भारे भारे,
भी[3] भरे हैं भूप दीप सभा भूलि भागी है।

१—तराक = शीघ्र। २—तराक = घोर शब्द। ३—भी = भीति।

'आलम' विलखि लखि लोग हो ज्यों लंका जरै,
बूझि देख लंकापति देह लगि दागी है।
सोने लोने भौन नये छिनक में छार भये,
होनहार ऐसो यहूं सोने आगि लागी है ॥२६३॥

बार बार बालिसुत बोले अरे लंकापति,
कौन गति मति तोहि दीन्ही विधि बावरे।
अजौं जीय जानि कै रे जानकी लै जाय मिलि,
बैर बकसाइ गहि राघो जू के पाव रे।
'आलम' अलप कोप किये ही तैं देखहुगे,
पानी मैं तरीहै सठ पाहन की नाव रे।
कंचन जो संच्यो है सु बचि है न रंच एकु,
रचना के भौन सब राख ह्वै है राव रे ॥२६४॥

जीत गई प्राननि अनीत भई भीति बसि,
बीति गयो औसिर बनावै कौन बतियाँ।
ऊक[1] भई देह बरि चूक है न लेह भई,
हूक बढ़ी पै न बिबि टूक भई छतियाँ।
'सेख' कहि साँस रहिबे की सकुचनि कपि,
कहा कहौं लाजनि कहौंगे, निलज तिया।
और न कलेस मेरो नाथ रघुनाथ आगें,
भेजु यहै भाखियो सँदेस यहै पतिया ॥२६५॥

१—ऊक = लुआठ, जलता हुआ अंगारा।

बीरन बिछोह बार छोरि छारि डारी, ही सु,
झारी नहीं जटनु अजहुँ तक तैसी है।
'आलम' अर्धरीक घर पैठे नहीं तब ही ते,
बैठे बन तन तपसी की गति तैसी है।
पीरे पीरे पात खात पात ही से पीरे भये,
पीर रघुबीर जू तिहारी कछु ऐसी है।
राजु कैसो राज और स्वारथ को आजु लगि,
भरथ न देखी सु अजोध्या फिरि कैसी है ॥२६६॥

दुसह दुखारो सब नेमनि ते न्यारो जिहि,
पेम पथ आये सीस पग है धरतु है।
राते किये बातें सुनि तातें सहि जात नहीं,
लोहू भरे धाइ ताते लोहे सों लरतु है।
कंपै जासों काल ज्वाल झंपै तैसो कठिन है,
कंपत बियोगी जु उसाँसनि भरतु है।
ऐसो काहू करै तकसीर[1] करवत लीबो[2],
जैसो बैर बिरही सों बिरह करतु है ॥२६७॥

नैना नीर धोइ डार्‍यो लोहू सब रोइ तातें,
भूरो है कै भूरो अब लोहू न लहतु है।
'आलम' न आवे बात पीरे मुख सीरे गात,
तातो हियो रातो करि सूलहि सहतु है।

१—तकसीर = अपराध। २—करवत लीबो = आरे से सिर कटवाना।

भीतर की भीत कहूँ लग्यो है पछीत थकि,
रीति यहै नेही की विदेही निबहतु है।
एक टक हेरत हिराइ रह्यो चित्त बिनु,
मित्र को वियोगी मानो चित्र ह्वै रहतु है ॥२६८॥

रेखता

दौरि दौरि हारे आवै ऐसे दिल भी न पावै,
क्रिया[1] है पखेरू तें दरयाव के नवारे का।
परा मेरी सूरति के नूर गिरदाब[2] बीच,
फूल सा फकीर फिरै साँझ लौं सबारे का।
दरद सा है जु रहा दरद न जाइ कहा,
मुआ है हिलाक[3] बीच मारना क्या मारे का।
सारा दिन फिरा करै तेरेई फिराक[4] बीच,
जो न चाहै चितमों तो चारा क्या विचारे का ॥२६९॥

दाने की न पानी की न आवै सुधि खाने की सु,
गली महबूब[5] की अराम खुसखाना है।
रोज[6] ही सों है जु राजी यार की रजाइ बीच,
नाज* की नजर तेज तीर का निसाना है।

१—क्रिया है ... नवारे का = जहाज का पक्षी बना डाला है। २—गिरदाब = भँवर। ३—हिलाक = मृत्यु। ४—फिराक = [illegible]। ५—महबूब = मित्र। ६—रोज = रोना। * नाज = हाव भाव।

सूरति चिराक रोसनाई आसनाई बीच,
यार यार धरै थलि जैसे परवाना है ।
दिल सौं दिलासा दोऊँ हाल के न ख्याल हूजे,
बेखुद[1] फकीर वह आसिक देवाना है ॥२५०॥

दिलतैं तरीके धोइ इस्क महरम होय,[2]
रोसनाई[3] को न रोइ यार पुरनूर[4] है ।
मनी[5] की मनाही यारी तेता ज़ौक़[6] जेती यारी,
यारी बीच ख्वारी का गुमान ही गरूर है ।
'आलम' जुदाई ते तू काहलौं न परि देखि,
दरद नज़ीक पाए दौरू कहा दूर है ॥
साबित कदम राखि कबहूँ न भूले राह,
सादक* नजर किए हादकां हजूर है ॥२५१॥

गम के नसीब तें गनी‡ है जैसे राज पाए,
आसक गरीब को गुमान मनी माल क्या ।
नाज ते निवाजि कै नज़ीक ही निहाल किया,
जीवने की जौक में जुदाई का जवाल क्या ।
यह उस राज से खराब हुआ खाक ही में,
खैर नहीं खूबी बीच खूनी तेरा ख्याल क्या ।
दिल है जु आवै सो दिलासा भी न पावै यानों,
यार दिलदार ऐसे बेदिल का हाल क्या ॥२५२॥

१—बेखुद = बेसुध । २—इश्क महरम = प्रेम का मर्म जाननेवाला ।
३—रोशनाई = प्रकाश । ४—पुरनूर = प्रकाशपूर्ण । ५—मनी = अहंकार ।
६ जौक = मजा । * सादिक = सच्चा । † हादक = सच्चा वैद्य । ‡ गनी = धनी ।

थोरी वार है जु कछु थोरो सो मैं ताकि आई,
ओरो-सो बिलाइ कहीं छिन हो मैं खोइगो।
धीरज अधार ते रह्यो है खंग[1] धार जैसो;
आँसुन की धार सों न धूरि है जु धोइगो।
आहि सुनि आई औ न चाहि ताहि पाई[2] फेरि,
देखि 'सेख' मजनूँ बिना हो नींद सोइगो।
नीके के निहारि, वाके बसननि झारि डारि,
तार तार ताकि कहूँ बार सो जु होइगो ॥२७३॥

सवैया

[२७४]

लई छलु कै हरि हेन हला मिलई, नवला नव कुंजनि माहीं
'आलम' आली-अकेली डरै हित वैपति जे बतियां चित माहीं
मुखनाय भरे दृग दीन तियाँ, जल छोन में मीन मनो अकुलाहीं
चौंकपरै चितवै चल नीचहि डोलत ज्यों पिय की परिछाहीं

१—खंग = तलवार। २—चाहि पाई = देख पाया।

सवैया

[२७५]

कान्ह प्रिया धनिकै बिलसैं सखी साखि सहेट घरी जिहि काछैं
कबि 'आलम' मोद बिनोदनि सों तनस्वेद समै मदनज्जल लाछैं
तिय भाल जगम्मग ह्वै बिंदुली अलकैं सुकियानन ऊपर आछैं
भासत है ग्रसिबे ससि संगम भानु छुप्यो सुरभानु[1] के पाछैं

[२७६]

बनिता बनि बेष चलीं बन को बिहरैं जहँ कान्ह बिहारनि सों
अलकावलि स्वेद प्रसून लसैं प्रगटे उडु ज्यों तमधारनि सों
तिलकद्दुति चारु मृगम्मद सों छबि छोर लगे दृग तारनि सों
कबि 'आलम' सोभित कंज उभै अधमैं भुवभृंग के भारनि सों

[२७७]

साँझ समै निकसी घर सों चुनरी पहिरैं रति रूप सवाये
'आलम' लै सजनी तिहि को गुरु बैठे की संक सकोच गँवाये
नूपुर को धुनि धाइ कै कान्हर रीझि रहे सखी यों रिझवाये
घूँघट हीं महँ नेकु चितै हँसि भौहँ चली तियभौंह नचाये

[२७८]

ए लै अली लखि लाई हौं लाल यहै सुनि बाल सबै दुख मोचै
ह्वै सकुची गुरु लोगनि मैं अनबैननहीं चित सों चित रोचै
गुरु ठौर उठी बहराइ कै बाल रह्यो न पर्यो अति लोचन लोचै
घूँघुट की पलकैं कर ज्यों पसरै फिरि एकहि बार सकोचै

१--सुरभानु = राहु।

थोरी यार है जु कछु थोरो सो मैं ताकि आई,
ओरो-सो विलाइ कहीं छिन ही में खोइगो।
धीरज अधार ते रह्यो है खंग[1] धार जैसो,
आँसुन की धार सौं न धूरि है जु धोइगो।
आहि सुनि आई औ न चाहि ताहि पाई[2] फेरि,
देखि 'सेख' मजनूँ बिना हो नींद सोइगो।
नीके के निहारि वाके बसननि झारि डारि,
तार तार ताकि कहूँ यार सो जु होइगो ॥२७२॥

सवैया

[२७४]

लई छलु कै हरि हेतु हला मिलई नवला नव कुंजनि माहीं
'आलम' आलो अकेली डरै हितवैपति जे बतियां चित माहीं
मुखनाय भरे दृग दीन तियां जल छोन में मीन मनो अकुलाहीं
चौंकपरै चितवै चल नीचहि डोलत ज्यों पिय की परिछाहीं

१—खग = तलवार। २—चाहि ताहि = देख पाया।

[२७५]

कान्ह प्रिया वनिकै बिलसैं सखी साखि सहेट बदी जिहि काछैं
कबि 'आलम' मोद बिनोदनि सों तनस्वेद समै मदनज्जल ताछैं
तिय भाल जगम्मग ह्वै बिंदुली अलकैं सुकियानन ऊपर आछैं
नासत है ग्रसिबे ससि संगम भानु छुप्यो सुरभानु[1] के पाछैं

[२७६]

बनिता बनि वेष चलीं बन को बिहरै जहँ कान्ह बिहारनि सों
अलकावलि स्वेद प्रसून लसैं प्रगटे उड़ ज्यों तमधारनि सों
तिलकद्दुति चारु मृगम्मद सों छबि छोर लगे दृग तारनि सों
कबि 'आलम' सोभित कंज उभै अधमैं भुवभृंग के भारनि सों

[२७७]

साँझ समै निकसी घर सों चुनरी पहिरैं रति रूप सवाये
'आलम' लै सजनी तिहि को गुरु बैठे की संक सकोच गँवाये
नूपुर की धुनि धाइ कै कान्हर रीझि रहे सखी यों रिझवाये
घूँघट हीं महँ नेकु चितै हँसि गोहँ चली तियभौंह नचाये

[२७८]

ए लै अली लखि लाई हौं लाल यहै सुनि बाल सबै दुख मोचै
है सकुची गुरु नारिन मैं अनबैन नहीं चित सों चित रोचै
गुरु ठौर उठी बहराइ कै बाल रह्यो न पर्यो अति लोचन लोचै
घूँघुट की पलकैं कर ज्यों पसरै फिरि एकहि बार सकोचै

1--सुरभानु = राहु।

थोरी यार है जु कछु थोरो सो मैं ताकि आई,
थोरो सो विलाइ कहीं छिन ही में खोइगो।
धीरज अधार ते रह्यो है खंग[1] धार जैसो,
आँसुन की धार सों न धूरि है जु धोइगो।
आहि सुनि आई औ न चाहि ताहि पाई[2] फेरि,
देखि 'सेख', मजनूँ बिना हो नींद सोइगो।
चोंकै के निहारि धाके बसननि फारि डारि,
तार तार ताकि कहूँ बार सो जु होइगो ॥२७३॥

सवैया

[२७४]

लई छलु कै हरि हेत, हला-मिलई नवला नव-कुंजनि माहीं
'आलम' आली-अकेली डरै हितचैपति जे बतियां चित माहीं
मुरझाय भरे दृग दीन तिया जल छोन में मीन मनो अकुलाहीं
चौंक परै चितवै चल नीचहि डोलत ज्यों पिय की परिछाहीं

१—खग = तलवार। २—चाहि ताहि पाई = देख पाय।

सवैया

[२७५]

कान्ह प्रिया बनिकै बिलसैं सखी साखि सहेट बद्री जिहि काछैं
कवि 'आलम' मोद विनोदनि सों तनस्वेद समै मदनजल ताछैं
तिय भाल जगम्मग ह्वै बिंदुली अलकैं सुकियानन ऊपर आछैं
भासत है ग्रसिबे ससि संगम भानु छुप्यो सुरभानु[1] के पाछैं

[२७६]

बनिता बनि बेष चली बन को बिहरै जहँ कान्ह बिहारनि सों
अलकावलि स्वेद प्रसून लसैं प्रगटे उडु ज्यों तमधारनि सों
तिलकद्दुति चारु मृगम्मद सों छबि छोर लगे दृग तारनि सों
कवि 'आलम' सोभित कंज उभै अधमैं भुवभृंग कै भारनि सों

[२७७]

सांझ समै निकसी घर सों चुनरी पहिरैं रति रूप सवाये
'आलम' लै सजनी तिहि को गुरु बैठे की संक सकोच गँवाये
नूपुर की धुनि धाइ कै कान्हर रीझि रहे सखी यों रिझवाये
घूंघट हीं महँ नेकु चितै हँसि गोहँ चली तियभौंह नचाये

[२७८]

ए री अली लखि लाई हौं लाल यहै सुनि बाल सबै दुख मोचै
है सकुची गुरु नारिन मैं अनचैननहीं चित सों चित रोचै
गुरु ठौर उठी बहराइ कै बाल रह्यो न पर्यो अति लोचन लोचै
घूँघुट औ पलकैं कर ज्यों पसरै फिरि एकहि बार सकोचै

1--सुरभानु = राहु।

[२७६]

नवला नव नेह नवीन सखी निन सों सकुचै मुख मोरनि है
प्रथमागम संक छुटी कछु पै चित में रसरीति हिंडोरनि है
कवि 'आलम' घूँघट ओटहि में कबहूँ पिय सों दृग जोरनि है
जितनो चितवै उत ओर चहै पुतरी जुरि लाज बहोरति है

[२८०]

उठि आली चलो बनमाली जहाँ जमुना जल मंद हिलोरनि की
कवि 'आलम' वा बन बीथिनि में मुरली धुनि है बन मोरनि की
दृग वारिज जानि बिलंबनि है जिय संक धरै अलि डोरनि की
सुनि चंदमुखी मुख चंद चितै निसि चंचल चंचु चकोरनि की

[२८१]

चारु प्रसून प्रवाल लता प्रति प्रीति लौं है पिय कुंज गली री
मंद समीर सुनीर कलिंदी के तीर तहीं ब्रज बीर बली री
मादमयी मुरली मधुरध्वनि लै कवि 'आलम' सोच भली री
जाति सुजाति तू जाति नहीं बन जाति है रातिऽसिराति अली री

[२८२]

घोर घटा उमड़ी चहुँओर तें मानु न कीजतु ऐसो अयानी
तूं जु बिलंबतु है बिनु काज घड़ी बड़ी बूँदनि आवैगो पानी
मेरे कहे उठि मोहन पै चलि को सब रानि कहैंगी कहानी
देखि तुही ललनारी लतानि को येऊ तमालनि सों लपटानी

[२८३]

नवलो नव नेह नवीन प्रिया रतियो रति राह डरे लखि ओऊ
'आलम' अंग छुटी अँगिया तन कंचन आभ भई छवि कोऊ
पसरयो कर कान्हको आँकी तिया करसों कुच पावन झाँपत सोऊ
देखि भुअंगम कंजनि मध्य दुरे माना हंस के सावक दोऊ

[२८४]

बैठे प्रजंक प्रिया प्रिय अंकत[1] संक तजे भरि अंक मिलाहीं
गोल कपोल दिपैं दृग चंचल मध्य तें सेते कटाछ न जाहीं
कामिनी को कमनी तन कुंदन रोम की माल लसै हिय माहीं
'आलम' उपम का भव री कवरी[2] प्रतिबिम्ब कि स्यामकी छाहीं

[२८५]

सैन समै सित सेज समीप सुसोभत स्यामल गौर को संगम
भामिनि भूषन भेष बनी भरि कोटिक भाव करै भुव भंगम
अधरपुट पान पियूष के पुंज कुचंदर देत पिया रस संगम
'आलम' सिधुत बंदन इंदु चक्का मनो संधि सुमेरु भुअंगम

[२८६]

बन के गृह सुन्दर सैन किये ललना नंदलाल इकन्तन के
कवि 'आलम' ये छवि तें न लहैं जिन पुंज लये कल वसन के
तन स्याम के ऊपर सोभित यों लगि फूल रहे सतपत्तन के
जल झाल सरोवर मध्य मनो झलकैं प्रतिबिम्ब नछत्तन के

१—अंकत = परस्पर प्रमदृष्टि से देखते हैं। २—कवरी = चोटी।

[२८७]

राति रँगी रति रीतिहि में रस ही रसे नायक सौं रति को
रुचिसों मुचिकै सुचि सैन करी अलि संग कली जनु मालति की
सित फूल हिये हरि के छिटके कबि 'आलम' या उपमा चित्ति की
सँचरी नभ रंध्रन के मग ह्वै निसि में मनु ज्योति निसापति की

[२८८]

एक समै सँग प्रानपिया जु रमै नंदलाल प्रजंकहि जू
छलु कैऽब चली बरबालकी आलि दुरे बरनायक अंकहि जू
धाइ गही कबरी कर तें अधरम्पुट देत निसंकहि जू
अहि के मुख तें मानो लेत छुड़ाइ ज्यों गारुड़ मैन मयंकहि जू

[२८९]

सतपत्रके पत्रनि सेज सजै मिलि सोवत कान्हर संग लली।
पिय की भुजतीय की ग्रीव गही तिय की भुज पीव की गीव रली
कबि 'आलम' अमरोमावलिके जगै चौकी जराधकी जोति भली
जुग जानु सुमेरुके बीच मनो धरि धीर कलिंदीकी धार चली

विपरीति वर्णन

[२९०]

[illegible] ते विपरीति रची रति मोति धँसै हँसि हंस विहंगम
फंद छुटी अटकी लट सों छिटकी छुटै अंग्र ज्यों, गंग तरंगम
हाँ जल 'आलम' धार सहस्र है ह्यां कुच मेद गिरे सिव जंगम
हार हिये हरि के जु लसै मानो होत सितासित सागर संगम ।

[२९१]

रीति ठटी विपरीति के अंग करी ललना भुव भंग अधंगति
'आलम' ओझल आलि कहूँ रति ऐसी कछू अवकोकि उमंगति
लोल छुटी लट सों मुकुता लर अग्र जुटी श्रम के कन संगति
लूटि सुधानिधि राजको राहु चल्यो पनहा[1] चली उड़ पंगति

[२९२]

केलि करै विपरीति कला रचनी नंदलाल उभै युग्रि मारे
अधको धसि गो पटु सीसहूँ ते निकसो कचरीक घनी कचकारे
'आलम' गोरे लिलाट लसे ललित श्रुतिफूल जराउ के धारे
खंडित इन्दु की कोरनि मानहु मंडित हैं दुहु ओरनि तारे

१—पनहासु = चोरी का पता लगाने के लिये । चोर को पकड़ने के लिये ।

[२६३]

मजि सौज संयोग को भोगकला जुग नैन मिलाइ गई सजनी
कवि 'आलम' हाम कै वास मिलै मलयादिक और सुवास घनी
कुच कुंकुम के कन अंकम सों झलकैं तन कान्ह के जोति घनी
बरसे जुग मेरनि सों मनु हैं लगीं स्याम घटा तन हेम कनी

[२६४]

हेम लता तन राधिके जू तन स्याम चढ़ै दिन ही दिन बानी[1]
पनिसों बनियाँ जलपै हिमसों ते सुने कवि 'आलम' प्रान हितानी
हास विलासनि दंतन मैं छिटकै छवि सो उपमा जिय आनी
मानो विधुंतुद[2] आसु समै सुतो आय कलानिधि मध्य समानी

[२६५]

*नील निचोल निसा महँ त्यों बिधु पैठत कंचुकी कुंभ अटारी
छुवै पिय पल्लव कालिम ज्यों कुच मैनु गहै कर मूड़ जटारी
'आलम' यों जुवती अब दै नख रेख चली त्रिभंगी हरि द्वारी
भई रति सों रितु राति रगी रति मानो हना हर काम कटारी

[२६६]

हरि कामी अमूरति काम जिते सचु[2] लेन पिया बनिता घर तें
कवि 'आलम' हेत संकेत समै रसकेलि कलोल उभै भर तें
कुच उच्च में वक्र नखच्छत यों बरनो मनमोहन छ्वै करतें
अति आरकता[3] सुक चंचुपुटी निकसी मनो कंचन पिंजर तें

१—बानी = रंगत। २ विधुंतुद = राहु।

* इस छंद का अर्थ हमारी समझ में नहीं आया। हस्तलिखित प्रति में पाठ ऐसा ही है। २—सचु = सुख। ३—आरकता = (आरक्ता) खूब लाल

[२९७]

रानि समै रतिनायक जू सुखदायक सेज सुदेश निवासी
आनँद फंद अमोद मों पोषि पिया रति केलि कला सों विलासी
प्रात भये अलसाने लला सरसानी अली रस लेत हुलासी
यातें सनेह सुगन्ध भयो मिलि तीय तिली पिय फूलनि वासी

[२९८]

रति रीति चितै रमनी झुकि कै रिस नैकु करी अध ऊरध भौंहैं
'आलम' भूषन धारि सुधारि कसे कुच कंचुकि फेरि पिछौंहैं
कर ऊपर बेसरि मंडि नासा मुकुताहल के गजरा छवि सौहैं
घेरि मनौ उडुपुंजनि लै सरसीरुह आनि करै ससि सौंहैं

[२९९]

रति अंतसों कामिनि दंत समै रसहीं बस मैं सुखसैन समै करि
मदनानल पीर सरीर भई तन मैं कवि 'आलम' आलसता भरि
पिय पानि कुचाग्र दै तिय के झलके नख मंजुल जोति जगै धरि
संभु के सीस सरोरुह के दल छोरनि मानहु ओस रही ढरि

[३००]

रतिदानु दये अबला बिगसी भ्रकुटी करि बंक सरासन सी
कवि 'आलम' कुंतल चारु छुटे कहुँ कुंकुम अंकित है कन सी
मद लै खलि बेसरि नासिक के अरुझै झख भूम चले बनसी
मिलि कै कच पुंजनि लाल चुनी चमकै घन मैं पटबीजन[1] सी

१—पटबीजन = जुगुनू ।

[२०१]

कोक कला खनी रति नागर केलि ठटै सब रैन सिराई
प्रात समै सिथलत्तन सुन्दरि अंग रह्यो बसि आलसताई
जागि चली कर आली के कंध दै है कवि 'आलम' ऊपम पाई
चंदन खंभ के अंकम[1] मानहु डोलत चम्पक माल सोहाई

[२०२]

अति मुदित है प्रमदा मन में मधुसूदन को मधु मोद लये
कवि 'आलम' लालस आलसु डारि चली सुआली तजि पौद लये
कर पल्लव दीप दुराये भई दुति पानि में रैनि बिनोद लये
कविता बरनैं छबि ताहि मनो सविता सुत बारिज गोद लये

[२०३]

नवला स्रम लोचन रोचन के पल मोचन पूरि रही जल सों
कवि 'आलम' केलि कला हरिजू रिझई न कछू खिझई बल सों
तिहिंको भरु[2] ज्यों रविके अँग को अँगयो[3] न परै नलिनी दल सों
कल कोमल बाल कलेवर यों अति काहल होत कुलाहल सों

[२०४]

कंचुकी नील लसै कुसुँभी मुकता लर कंठ में कुंतल छोरे
नैन बिसाल मराल कोसी गति बाल रसाल बहिक्रम[4] थोरे
नेकु चितै हरि त्यों[5] कवि 'आलम' चंचल चाल चली चित चोरे
जोयन रूप जगामग सो कोउ या मग नारि गई तन गोरे

१—कै अंकम = अंकवार में लेकर। २—भरु = भार। ३—अँगयो न परै = सँभाला नहीं जाता। ४—बहिक्रम थोरे = थोड़ी उम्रकी (नवला)। ५—त्यों = तरफ।

[३०५]

सजनी मिलि द्वै अवलोकि कहैं अतिही हरि राधिके के बस री
सखि देखि धौं कुंज बिहार वहै कवि 'आलम' और कहा रस री
अँगिया सित झीनी फुलेल मली तरकी[1] ठौर ठौर कसी कस री
किधौं प्रात सुमेरु के द्योस भयो जितहीं तित ओस मनो पसरी

[३०६]

प्रात समै घन बीथिनि मैं निरखै इक नागरि नारि निमेखैं
'आलम' आलस-भूषन अंग रह्यो लगि भावतो भामिनि भेखैं
कंचुकी लाल कछू मसकी कुचसींध की ओर चलो सखि देखैं
प्रात रतोदल[2] के तरके[3] प्रगटी मानो पुंज पराग की रेखैं

[३०७]

स्याम असंक मयंक मुखी निरखे रति औ रतिनायक हारैं
'आलम' कुंकुम के रँग की अँगिया अंग में छबि कोटिक धारैं
मसकी कुच कोर की ओर लसै सु कहा उपमा कवि और बिचारैं
फूटत चंचुपुटी प्रगटी चकवा मानो पीत परागहि डारैं

१—तरकी = मसक गई है। २—रत्तोपल = (रक्तोत्पल) लाल कमल।
३—तरके = फटने से।

यशोदा की उक्ति

[३०८]

औटि धर्यो है दुराय दुहाइ कै प्यारे लला रुचि सों पय पीजै
लोटत हाथ के भूखन छूटत रोवत हौ बलि तौ बल छीजै
'आलम' दूध दही को मिठाइ को मेवा का नाहिं करौ कहा कीजै
कान्हर आर[1] निवारि बलाइ ल्यों आपनी माइ खिझाइ न लीजै

[३०९]

अपने गृह माखन खाइयो आइयो लाल नहीं कबहूँ पर नेरे
बरजै जननी कवि 'आलम' यों विलमौ जु कहूँ न अबेर सबेरे
हौं सिख देन सुनौ सुत स्याम व कंस के सैन सबै अरि तेरे
धाम रहौ निकसौ न कहूँ तुम रांक को सो धन कान्हर मेरे

[११०]

बीर बड़े मुरली लघु बीरन माँगत है तुम देउ बला[2] हो
हौं तो न देहौं न देन हौं माहि तू है मेरी आनँद चंदकला हो
'आलम' जान चले नित डोलत बोलत लै जननी सुख लाहो
जान दै बंसी कहा लै करैगो तू धाइ लै माखन आर लला हो

१—आर = हठ। २—बला = बलदेव जी।

[३११]

नन्द लई मुरली कर कै नव लै कर कान्ह लखै परछाहीं
'आलम' लै अधरा परसै छिन ही छिन चाउ सों माखन खाहीं
व्याकुल कान्ह बजाइ न जानत त्यों जननी पहँ पूछन जाहीं
मैया री ज्यों ब्रज की बँसुरी ऐसी मेरीयो बाँसुरी बाजतु नाहीं

[३१२]

धौरत गाइ बहोरन छाँह ते घाम न धारि बयारिन साधे
डोलत हैं जिनहीं नित ग्वाल सु गोधन[1] फैलि रह्यो बन आधे
काजरि[2] के हित सों कवि 'आलम' आवत लै बछरू धरि काँधे
हाथ छरी पनहीं पग पातँ की सीस खुहू कटि कामरि बाँधे

[३१३]

काल्हि के कान्ह कलिन्दी के कूल लये सँग बच्छ बसे बन मैं
छतियां अकुलानि बिहानि न जानि बिछुड़ित ताप नई तन मैं
कवि 'आलम' जीवन ओट भये पल लोचन सोच बढ्यो मन मैं
तातें असोधन ह्वै चली सोधन सो धन ह्वै गयो गोधन मैं

[३१४]

ग्वालन पुंज के मध्य लला दरसैं परसैं रज अंग रुचै
निरखे कवि 'आलम' पंगु भयो मनु रूप अपारहिं क्यों ऽव रुचै
नख नाहर बंक हिये हरि कै जटितम्मनि मैं उपमाहिं सुचै
थिनयें परिया दुतियागम सों मनो द्वैज कला दिननाथ मुचै

१—गोधन = गायों का समूह। २—काजरि = कजरी गाय।

[३१५]

सुर ज्ञान जु ध्यान मुनिन्दनि कै बरन्यो- असकंध दुआदस में
कबि 'आलम' पूरब प्रेम-प्रताप सु तौ ब्रज नारि कियो बस में
स्रुति कुंडल माल औ भूषन भूषित किंकिनि मुद्रिक सैन समैं
तन कान्ह कियो मनि जोति मनो जमुना जल सूरज की रसमैं¹.

[३१६]

कछुनी कटि स्वच्छ कछे कछनी बरही बर पुच्छ को गुच्छ बनो
बन राजत श्री मुरली धर जो धुनि सों दिन अनँद होत घनो
हिरदै भृगु चर्ण को चिन्ह लसै उपमा कवि 'आलम' कौन गनो
प्रगटे सु अनंग प्रसंग लगे छवि सुन्दरि अंग के अंक मनो

[३१७]

मधुसूदन श्री नँद-नन्दन जू दुखकंदन चंदन खौर करी
तुलसी दल माल बिसाल लसै निरखे छवि कामकी कान्ति हरी
कबि 'आलम' भालके ऊरध यों उपमा सिखि-चंदकी पंतिधरी
सुखमा के समूह सरोवर में मानौ फैलि फुलेल की छींट परी.

[३१८]

अंग त्रिभंग किये मन मोहन ते मन काम के कोटि हरैं
चित चाहि चुभ्यो वृषभान सुता तन बांसुरी आँगुरि गैन धरैं
चंचल चारु चलैं कर पल्लव 'आलम' नेकु न नैन टरैं
तजि रोस सुचारु सुधा कर पै मनो नीरज के दल निर्त करैं.

१—रसमैं = (रवि) किरणें ।

[३१९]

नंदलला मुख चंद चढ़ै छबि कोटिक चंद कला पचि हारी
'आलम' काम को काम यहै ब्रज बाम के काम की कामना टारी
सुन्दर नासिका पास रही अघ भीजंनि है मसि सोभित भारी
पाँडुकि कंठ नवीन उठे प्रगटो मनो कीर के कंठ की कारी

[३२०]

सुन्दर नंदकिसोर तरंगनि अंग को संग अनंग गह्यो
महिला सब मोहि रही महि की भनै 'आलम' रूप महा उमह्यो
मसि भीजति कान्ह के आनन पै लखि स्याम सी रेख को भेद कह्यो
छबि पूरन इन्दु के मध्य मनो दुतिया के सरूप है राहु रह्यो

[३२१]

जल क्रीड़त श्री नँद-नंदन जू दुति बंदन निन्दति सूर प्रभा को
बनितादिक मुद्दित उदित रूप तें बंछति आनँद चंद सुधा को
'आलम' कै कुबलै दल मोलि बन्यो तनु स्याम बिराजत जाको
मूरतिवंत लये सरिता सँग संभु धरै मनो सैल सुता को

[३२२]

मुकुता मनि पीत हरी बनमाल सु तो सुरचापु प्रकासु कियो जनु
भूषन दामिनि दीपति है धुरवा सित चंदन खौरि किये तनु
'आलम' धार सुधा मुरली बरषा पपिहा ब्रज नारिन को पनु
आवत हैं बन ते घन से लखि री सजनी घनस्याम सदा-बनु

[३२३]

उलमे¹ तुलसी दल मंजु लसैं तुलसे कुल से संग मौल रसालहि
नौ द्रुम मैं कदम-द्रुम फूल फली घुँघुची फल सों फल जालहि
'आलम' डार सुडारनि छोरनि नीरज नील लये सँग नालहि
मैन विसेषत लेखि महा सु तौ देखि सखी घनस्याम तमालहि

[३२४]

सखिरी नभ सिंधु दुरन्त रये गुन पूरन सों जग जागत है
कवि 'आलम' नील कहैं सब ताहि सु तौ अगमै मन लागत है
सुख दायक कान्ह पराक्रम सों नर जद्यपि यों अनुरागत है
लखि जात नहीं बुधिज्ञानहु सों, तातें लोगहि स्याम से लागत है

[३२५]

आवत जातहु ते यहि मारग डीठि परै कहुँ साँझ सवारे
ताहि ते लोचन लेत भरिभरि लोचत लोचन लाल तिहारे
अटान चढ़ै उतरै कवि 'आलम' झाँकत दौरि झरोखनि द्वारे
खाइ न पान सुहाइ कछू न अन्हाय न नारि रहै मनु मारे

[३२६]

धून कुंडल गंड प्रचंड कला सिर मंडि सिखंडिनि के चँदवा
मुरली धुनि की सुरली² सुनि कै सुर सों मन आतुर को फँदवा
सुखमूल बिलोकत ही मकरध्वज भूलि रह्यो मति को मँदवा
कवि 'आलम' आनँद चन्द सदा सखि वा लजिरी नँदको नँदवा

१—उलमे = उलझाना। २—सु-रली = रेलापेल (अधिकता)

नवयौवना

[३२७]

पैंड पैंडाइ चलो फिरि ओरनि ऊँचकै भौंहनि मीस उचाये
नैन डरैं थिड़रैं फिरि आपन काननि कोर दरीन दुराये
'आलम' आनि गहो पहिले मन ठौरहि ठौर को भेदु बताये
राहु फिरो तन की नगरी मुगुधाई[1] गयी अब जोबन आये

[३२८]

भोर भयो जो सरीस बिपे निकसो सरकार हुती लरिकाई
ठौरहि ठौर भई कछु और जु अंग अनंग फिरी है दुहाई
आइ गये अबताली[2] दोऊ कुच छाप लये सिर स्याम सुहाई
'आलम' लाल गुपाल की सौं सिरदार भई तनमें तरुनाई

[३२९]

पैस फिरे पलटो फल फंठ लसै फटि फैल[3] कपोलनि पाई
चाहनि नैननि चाह रहै चमकै चख औ भुजमूल फलाई
रूप दसा सब त्योंही भई तन जोबन की छवि यों भरि आई
बाहिर दर्पन ज्यों दरसै झलकै छवि छाँहर में जिमि झाँई

१—मुगुधाई = लड़कपन। २—अबताली = (फा० अबदाली) अदल बदल कर देनेवाला हाकिम। ३—फैल = फैलाव, विस्तार (विराम)

मानवर्णन

[३३०]

औधि टरी न टरी ललना न टर्यो चित नेकु रह्यो लव लीनो
'आलम' छीन छपाकर जोति छपो निधि छीर छपा भई छीनो
तेहि ठौर उरोज के अग्रनि लौं बरसी जलधार भये दृग दीनो
खेलत संभु सुधाकर में घनसी कर डोर लगी जुग मोनो

[३३१]

मान मनी सजनी सिख मानि घनी सिख दैन को मान हटो मुकि
'आलम' नैननि रूप को भेद निमेषन जो पिय देखत हैं दुकि,
चन्दन की बिंदुली पर रंग भरे मुकुता छवि है ललना झुकि
झूमी लता कन ओस लगे शध गोन बंधूक प्रसून रहै रुकि

[३३२]

मान कला नवला सुनि कै सहुलासनि, लाल मनावन आये
'आलम' आली न मानें कह्यो पै तिया मन में मनमोहन भाये
रोस भरे अँसुवा पट ओलक लोलक गोलक मध्य समाये
अँजन सों मिलि कज्जल है जुग खंजन ज्यों जमुना जल न्हाये

[३३३]

तंजिमान मुगारिपै नारि चली कवि 'आलम' लोल कलिन्दी के तीरहि
हार हिये हरयें पग धारि दिपै द्विज पंति हरै छवि हीरहि
भुज डोलत बोलत मंद गती कर पल्लव चारु लये छवि बीरहि[1]
कोस बिदारन के भ्रम सों निकसे दल कंज गहे मनु कीरहि

[३३४]

सुधा को समूह ता मैं दुरे हैं नछत्र किधौं,
कुंद की कली की पाँति बीनि बीनि धरी हैं।
'आलम' कहै हो पैन दामिनी के बये बीजु,
बारिज के मध्य मानो मोतिन की लरी हैं।

स्वाति की बूँदें बिधि विद्रुम मैं वासु लीन्हो,
ताकी छवि देखि मति मोहनै बिसरी है।
तेरे हँसे रदन किशोरी दुति राजत है,
हीरनि की खानि ससि मध्य ह्वै निकरी है॥

[३३५]

तैं कियो मान मनावत ही मनमोहन जामिनि जागि गये
अजहूं रही मौन अनम्मनि ह्वै मन ही मन नीचहि नैन नये
तरुनी अरुनी रचि प्राची दिसा कवि 'आलम' उपमा ये जु ठये
तम मास को भान महीप चढ्यो तँबुआ तकि तानि उतंग दये

१—बीरहिं = पान का बीड़ा।

[३३६]

पेरये जो तुम कुंज के रंध्रनि कालि बिलोकी गोपाल के थोरें
आजु अयानि है आई है देखि मनो उन बातनि के तिन तोरें
चितये कच मैं बिपरीति समै अलि सावक से मधुमिस्र में डोरें
गुलाल की लालकलो कलकों मनो सेत कि लालको लाल झुमोरें

[३३७]

गोकुल तें गुकुलेसहिं लै गवन्यो सुफलासुत है अधिकारी
कवि 'आलम गोप गऊ गोपिका गन घोष भये सब दीन दुखारी
नन्द पठै फिरि जो नँद-नंदहिं दंद-उदेग उठ्यो जिय भारी
हारि सरबसु मारि मनै जैसे हारि चलै कर झारि जुआरी

[३३८]

ए रे अहीर अजौं कहि धौं हौं तो जाऊँ तहाँ हैं जहाँ गिरिधारी
कैसे फिर्यो मुख वा रुख सों सब गोकुल की सुख की निधि डारी
हेरि कहै जसुदा पति सों कवि 'आलम' व्याकुल है जिय हारी
आनँद चन्द गोविन्द बिना अब नन्द भई मति मन्द तुम्हारी

[३३९]

दीसत हैं दिसि थौर दसो जिय त्रास ससंक प्रकास दिसा की
कवि 'आलम' अंग लगै दगज्यों अबला वसि संग बिसाल बिसाकी
हिरदै अति ताप भई सुत के मुख सूखन है तिजि आनि तिसाकी
नेमु बहून सकों कहि हाँ सखि धौं निसि है कब जोन्हि निसाकी

[३४०]

पीय पयान की पावत चाह भये सुपयान कों प्रान उतालैं
आँसु औ साँस उसाँसनि दैरति आसनि साल वियोग के सालैं
'आलम' अंग अनंग की ज्वाल तें आंगनु भौन फुनिङ्ग से चालैं
ज्यौं जिय को ढिग आवत जानि परैं जमराज कों जी हू के लालैं

[३४१]

कान्ह चलौ विलँयौ न कहूँ सजनी जुगवै अब लौं अबलै
कवि 'आलम' व्याकुल नैन वियोग अरी विरहानल देह दलै
अँसुआ भरि डारै उसाँसनि सौं झलकै तन कंपत हीय हलै
सरजात की बूँद थवै रस मै छवि लोल मनो जल डोल चलै

[३४२]

जो झरिहैं भरिहैं घट सी घट है न घटै अँखियाँ उनई हैं
नींद गई निमपौ बिसरी कल मैं पल में पलओ न दई है
'आलम' आँधि की ओल अली अब लौं इन आँसुनि साँस लई है
पानिप डीठि सकेलि सबै जुरि कै पुतरी भर मार नई है

[३४३]

कान्हि पयान कह्यो सजनी तिय प्रान पयान के से दुख पावै
'आलम' छीन परी मुरछाइ परी छिति नीर सखी मुख नावै
सीतल ह्वै पग पानि गये छतिया तपि कै पियरी तन छावै
जो हू की जानि परै न कछू सखि देखत हूं जमहू भ्रम आवै

[३४४]

कान्ह वियोग वियोगिनि नारि परै दुख सोचनि नेकु निखूटै
'आलम' देह सदेह वियोग विरोपि[1] दलै सुख सम्पति लूटै
त्यौं जम आवत आजु कै नीठिहू आऊ[2] के ओर दुआनल टूटै
इते पर चंद दुखी करै मो कहँ या दुखतें सखी कैसे कै छूटै

[३४५]

बिछुरै ते बलबीर धरि न सकति धीर,
उपजी विरह पीर ज्यों जरनि जर की।
सखिनि सँभारि आनि मलय रगरि लायो,
तैसी उड़ो अवली कहूँ तें मधुकर की।

बैठ्यो आय कुच बीच उड़ि न सकत नीच,
रहि गई रेख 'सेख' दंत दुहुँ पर की।
मानहु पुरातन सुमरि बैर संभु जू सों,
मार्‌यो सम्बरारि[3] रहि गई फोंक सर की॥

[३४६]

मारिबे को तिय मार के मैं रही मेरे कहे पिक मोरनि मारि दै
मारुत मंद सु चंद दहै तनु मंदरि मूँदि सखी दिसि चारि दै
स्याम बिना कवि 'आलम' धाम तें कुंकुम मेद सुगंधहिं डारि दै
वारि कै देखि परै तन बातो सो नारि तू बावरी बारिज बारिदै

१—विरोपि = विशेष रोष से। २—आउ = आयु। ३—सम्बरारि = काम।

[३४७]

रूप सुधा मकरन्द पिये ते तऊ अलि फंद बियोग अरे हैं
'सेख' कहै हरि सों कहियो अलि ध्यान प्रतच्छ समान करे हैं
जो मन मूरति के निरखे हम देखत ही गिरि गात गरे हैं
जोति प्रसंग पतंग जरे इक झाँई के झूमत तेल तरे हैं

[३४८]

पंगु कियो पिलवान को पौरुषु लै चल्यो कुंजर कोटिक पेलि ज्यों
'आलम' दंती के दंत हिलायकै हाथ लिये कियो खेल सो खेलि ज्यों
कान्ह बली[1] तन श्रोन की छंछु लसैं अति जग्योपवीत सो मेलि ज्यों
नील नगध्धर इंदुबधू घनसार गिरिध्धर बिद्रुम वेलि ज्यों

[३४९]

कर पोथी लै पंथी के पंथ चले छिन ठाढ़े ह्वै पूछति हैं कहँ जैहो
गुन बैद्के बेदन बाँह गहो बिरहा बर को गुन कौन बतैहो
जोतखी हो तो चलौ घर भीतर बोधि धस्यो सुधरी दिन दैहो
'आलम' आजु घनो घन है घन के उनये जु घनो दुख पैहो

[३५०]

धरि रूप सुधा को पियूष मिले बिनु जीभ के स्वाद कहा रचिये
कवि 'आलम' बास को बास नहीं मन भृङ्ग सुबास भले सचिये
जल में जल के गुन जाने नहीं भये अच्छर अच्छर क्यों बँचिये
मुकुतै न कछू जुगुतै जबलौं रुप सुतौ भगतैं भगतैं जँचिये

१—बली = बलदेवजी।

चन्द्र कलंक

[३५१]

विधु ब्रह्म कुलाल को चक्र कियो मधि राजति कालिमा रेनु लगी
छवि धौं सुरभीर पियूष की कीच कि वाहन पीठ की छाँह खगी
कवि 'आलम' रैनि सँजोगिनि ह्वै पिय के सुख संगम रंग पगी
गये लोचन बूड़ि चकोरनि के सुमनो पुतरीनि की पाँति जगी

[३५२]

थिर कूरम थापि रसातल मैं विधि जानि सुनौ त्रिकुटी है ठटी
धरनीधर मत्य समत्य फनी सरिता सर सिंधु सनेह तटी
'आलम' कै गुन भेद मनो रवि प्रात को दीपसिखा जो जटी
सिद्धि धूम धुके दुति कज्जल की अजहूँ नभ कालिमा लै प्रगटी

[३५३]

औषधिनाथ विरोध गुनी गुन सोधि तमोरस भेद विचारा
'आलम' पूरि धरी घरिया रवि कीनो नरे नप तेज पसारा
आगि दई सँझये[1] अरुनी अति फूटि कै जंतु गयो उड़ि पारा
रैनि भरी कजरी बिधुरी जनु ह्वै फल धातु लगे मढ़ि तारा

1—सँझये अरुनि = सूर्यास्त समय की लालिमा।

[३५४]

गुन पाये हैं द्वै त्रिभँगी हरि के किधौं मैन बसन्तहि जोर परी
सुरचाप गड़ी तड़ तेग तये कवि 'आलम' उत्तर दच्छिन री
प्रगट्यो परिवार विपुन उतै इत पछिम ह्वै बिधु अर्ध धरी
दिसि चारि चितै चित चकित ह्वै जनु जुद्धत जोधनि खंगफरी

[३५५]

तै न सुन्यो जनकादि के द्वार पिनाक पर्‍यो जु सबै बिरचैं
कवि 'आलम' थान थपे उथपे को रहै बलु कै नर बैन रचैं
सार के साल उसालि धरे बुझि रावन देखि यहै परचैं
चिंगुटी गुन चाहि टकोरत ही कर लै रघुबीर करी किरचैं

[३५६]

कौसिला सासु सखो रघुबंसिनि केतक दूरि सबै सँग पैंयो
हौं अब हारी हौं हारी कह्यो सुनि कै हरि नैन हिये जल लैयो
'आलम' नीर के गोय रह्यो किये जानकी भूमि की ओर कवैंवो
घूँघर से बन वे बर रूख तहाँ हू ते और कहाँ लगि जैबो

[३५७]

टेक को मेरु अनेगनि टारिहौं दानव द्वार को दारुन हाथी
'आलम' कूल के मूल कुदारि हौं मेटि कुमंत सुमंत को गाथी
रावराइ को दूत बली जिहि दूखन खंडि कै तारिका नाथी
अंगद नाम अभंग भुजाबल बालि को बालकु राम को साथी

[३५८]

मंडित पान प्रचंड अखंडित संधि सिलीमुख दंडि कुदंडन
'आलम' लै श्रवनी कघनी चल्यो आवतु राम अडंडन डंडन
हे दसमाथ सनाथ अजौं करि माथ पुनीत ह्वै कै वर मंडन
तारिका तेज उतारक धारक तारि कहै खर दूषन खंडन

(कुच छवि)

[३५९]

अति आतुर चातुर कान्ह रमै तन में रस रासि नई सँचरै
कवि 'आलम' धाम विहार बढ़ै सजनी सिख चित्त सबै बिसरै
मुख पै कच कै अधिकारी खुले अध चौकी जगम्मग जोति करै
उत ह्वै मानो सूर उदोत कियो इत ओर सुमेरु कुहू उतरै

३६०

अलि कान्ह लता-बनिता मधि में मधु पान कियो मन मौत[1] समैं
कवि 'आलम' मध्य मुचे सकुची गति उर्द्ध करी भ्रकुटी रिस में
छुवि नील निचोल उरोजनि त्यों मसक्यो परिरंभन[2] के मिस में
कनकाचल शृङ्ग प्रकासन को रवि को कर दौरि परौ निसि में,

१—मनमौत = मन भावत, मनभाया। २—परिरंभन = आलिंगन।

[३६१]

रजनी थितई रति सौं सजनी थिरकैं दग द्वै तजि चंचलता
कवि 'आलम' आलस ही अलपै फिलकैं कुच खीन भई कलता.
किये चकित बाम हरी कँचुकी गई उघकि यों छवि अंग लेता
सकुच्यो जु सिघार समीर लगे प्रगटी सरको मनो उज्जलता

[३६२]

रजनी मधि राधिका गौन कियो निरखी अँखियाँ पति प्रेम भरी
कवि 'आलम' रंभन को ललचो रति लालच लै हिय लाई हरी
खरे छीन हरे पट की अँगिया दरकी प्रगटी कुच कोर सिरी[1]
अरुके जुग लाल सियालनि मैन के चक्र[2] की चंचु मनो निसरी

युगल मूर्ति

[३६३]

ब्रज भूषन भावति राधिके जू गुन रूप के साँचे सुअंग गढ़ी
कवि 'आलम' अंग सुगंध सदा परचै विरचैं करि कोक पढ़ी
कबनो भुज स्याम के कंध धरे रचनो मनो प्रीति की रीति बढ़ी
छुवि ता तन स्याम की सुन्दरता मानौं चंपलता नग नील चढ़ी

१—सिरी = (श्री) शोभा। २—चक्र = चकवाक।

[३६४]

चारु तमाल प्रसून लता किधौं स्याम घटा सँग विज्जुल गोरी
मधुपावलि कंज की माल मनो छबि पारस कंचन खंभ की जोरी
मूरतिवंत समुद्र समीप दिपै बड़वागि सिखा कछु थोरी
जो चलि 'आलम' नीके लखौं तौ पै नन्दलला वृषभान किसोरी

[३६५]

गुन रूप निधान विचित्र वधू हित प्यारो पिया मधुगंजन की
कवि 'आलम' पूरन काम समीप-सुदेह दिपै दुति मंजन की
कर पल्लव कज्जल सों दृग छोरनि रेख रचै पति अंजन की
लिखनो दल मंजुल कंजकी मैन लै चंचु सँवारत खंजन की

[३६६]

ब्रज संपति दंपति राजत हैं घन देखत रीझि अनंग गता
कवि "आलम" संग सुगंध समैं अँग अंग अनंग सुगंधरता
भरि भेंटत भामिनि भेटनि मैं भुज द्वै छबि पावति कोटि सता
मनो मंजुल लोल तमाल मैं नौतन चारु चढ़ी कलधौत[१] लता

[३६७]

बाम हितू ब्रजराज प्रिया बनि कै बिहरैं घन निभ्रम मैं
कवि 'आलम' एकहि ओक पढ़ैं अति दंपति एक बदिक्रम[२] मैं
ललना कल काँति कलेवर का झलकै हरि के हृदयाश्रम मैं

१—कलधौत=सोना। २—बदिक्रम=(वयक्रम) अवस्था।

[३६८]

वृन्द बधूनि के बीच जगै नव नेह लगैं उमग्यो तन आवै
चाह को चाउ भरे चपलै कछु लाजनि नैन सों नैन दुरावै
'आलम' है इत लाल लटू निरखै इकही टक बीच न पावै
यों लपटै पल में पुतरी चितवै पिय को मुख डीठि बचावै

[३६९]

संक तजे वृषभानु सुता जमुना महँ न्हात भई छबि भारी
बपु राजत चारु चिकुर किये जनु हेम लता कनकावलि धारी
हेरे हेरे आइ गए हरि हेरि सखीनि के ओझल ह्वै गई प्यारी
बारि मैं नारि दुरावति है कुच कोक मानो बिबि[1] बूड़की मारी

[३७०]

कुंज की ओट कलिन्द-सुता तहँ क्रीड़त राधिका संग कन्हाई
पौढ़ि प्रजंक सुअंक मिलै अँग अंग लसै अति मंजुलताई
रंध्रनि ह्वै निरखैं सजनी भनि 'आलम' यों उपमा मन आई
रैनि बरै सरि पारस[2] यों झलकै जल मैं जनु पावक झाँई

१—बिबि=दो। २—पारस=(पार्श्व) निकट।

अभिसार

[३५१]

किंकिनि कंकन क्वान[1] मिलै वर दादुर झींगुर की झनकारहि
भूषन की मनि एक भई जुगनू वर की मनि जोति अपारहि
'आलम' कामिनि को तन कुन्दन जाइ मिल्यो जग बीजु उजारहि,
काम के शासनि स्याम निसा वर वैरी सहाइ भये अभिसारहि

[३५२]

चन्द्र सुधाकर धार द्रवै जग मज्जित कालिमा टारि गई है
जोति की ओट सहेट भई अभिसारक कै अभिलाष नई है
सीस चढ्यो रजनीस, जवै तन की थिर पावन[2] छाँह भई है
जोन्ह छपा दुरि आवन को तम सौज मनो कर लाइ लई है

[३५३]

सोध सहेट भई रस के बस बासर की सुधि वेस बिसारी
है तुम सों तमई[3] बितई अब द्यौस चढ्यो सु चढ़ी कुल गारी
कौलनि तें छुटि भौंर चले तिन्ह को अभिसारिक छाँह निहारी
दौरि, चलै दुरिबे को हिये जिय जानति है यह जानि अँध्यारी

१—क्वान = (सं० क्वण) भूषणों की झंकार। २—पावन = अति छोटी। ३—तमई = तमी, रात्रि।

[३७४]

रैनि सरद सुधानिधि पूर चढ्यो जग कालिम छाँह अडारी
सैनि सहेट वदी निसि मैं बिचर्यो उठि गौन कियो अभिसारी
भूषन के मुकुता सति अंग सुकेस पुहुप्पनि सौं छबि टारी
दुरावति छाँह मनो मुसुकाइ सुजाइ मिली मनमोहनै प्यारी

[३७५]

माधव जू मधुमास मधुव्वन राधिका सों करि केलि सुचे ते
तहाँ रस के बसि आरस में सु गये तजि संगम सैन सुचे ते
उर तें उड़ि गो पट न्यारो उरोज सु'आलम' हार के बीच रुचे ते
मनो गिरि संधि के सिंग दुबिम्ब के वासनि आसनि मध्य उचे ते

[३७६]

औधि की टेक प्रबोधन को पिय सोधन कुंज गई सजनी
कवि 'आलम' बाल बिलंबि भये कलपै मिलि सेज सँताप घनी
पगि पीठि प्रसून उठी छबि सों छतियाँ लगि कुंकुम स्वेद कनी
बिरहा हनी फोंक कढी उत है प्रगटी इत है मानो बान अनी

[३७७]

औधि टरी न हरी निरखे सुडरी तिय कुंजगली भय भारी
कवि'आलम' आसउदास लये त्यौंत्यौं स्वाँस भरैअखियाँ भरि ढारी
हिये चौकी जराउ की आनन है मधि छूट चली धवली जलधारी
सींच सुमेर की अंकम काज मनो रवि को बिधु बाँह पसारी

आगतपतिका

[३७८]

हरि आगम की अँगना सुनि चाह सँवारत अंग हुलास हियो
कवि 'आलम' भूषन भेष बने छवि कोटिहि मैन को अंसु लियो
तिलकद्दुति कुंकुम मध्य ललाट सुचारु जराउ को बिन्दु दियो
अनुराग तें जाग जगम्मग मानो सुहाग को भाग प्रकास कियो

[३७६)

घर आँगन पैठत साँझ सवार मिलो अँखियाँ अँखियाँ जिय जी सों
'आलम' आन न सैन लखें पियको चितु तीय लियो चितु पी सों
पुर बीथिनि में मुरली सुनि के चलि आवत एक कछू मिस ही लों
कान्ह चितै मुसुकाइ इते कछु बोलति है कहि बात सखी सों

[३८०]

बालक सों बरु बैरु बढ़ावत बाटहि घाट अनीति सची है
ताहि सों खेल करौ नँद के सुत जाके हिये यह बात खची है
'आलम' थादिहि दोषु लगै सब कोऊ कहै यह याहि रची है
काँकरि यों जु कपोलनि छ्वै गई देखत ही कैसे आँखि बची है

[३८१]

डरिये इन्द्र सों जितनो हरि ये निसि मैं पटमोटनि खोलति है
इत ईतर ह्वै इतराई चले फिरि छाँह चिते तन तोलति है
कवि 'आलम' और तौ मोंगि रहैं अरी यातो इतै पर बोलति है
रहि री मचलानु कहा कहिये माई आपने जी पर डोलति है

[३८२]

लाज तजी जिहि.कान्हु सखी इन लोगन मैं वसि आपु हँसाऊँ
'आलम' आतुरता अति.ही तिहि लालचु हौं तुम्हरे सँग आऊँ
कान्ह मिलै तो मया.करि चाहत हौं न कछू जिय हू को सुनाऊँ
देखन को अँखियान महा सुख.जो अँसुवानि सों देखन पाऊँ

(३८३)

गोरस फेरि दुनासन के मिसि जाँवन हू हित जोवन जैये
रूखे ह्वै रोप ओराहनो हू यहि लालच बोसक यान बनैये
औरहु काज गये कवि-'आलम' पै ओहि नंद गली होइ ऐये
कौनहु भाँति कछू छिन कान्हरु जो अँखियाँ भरि देखन पैये

[३८४]

जात चले कछु दोपु लगै तेउ वावरि रोस करै ब्रज मैं वसि
'आलम' नैननि रीति यहै कुलकानि तजी पुती री मुँह मैं मसि
जद्यपि घूँघट ओट कियो हम कान्ह कहूँ चितयो फिरि कै हँसि
किंकिनि छूटि गई तरकी तनी लाज के संग चल्यो अँचरा खसि

[३८५]

रोकत हो मग रोकत हो सु कहा इन बातनि कान्ह अघैहौ
'आलम' ऐसीयै रीति चली माई या ब्रज में कछु उलटिये हौ
गागरि डारि भजे इंडुरी गहि काँकरि डारत औसरु लैहौ
हौं उमहीं जु कह्यो सु कह्यो हम का कहिहैं तुम ही पछितैहौ

[३८६]

और सबै ब्रज की जुवती तिन तो अपने हितु कै हरि लेखे
'आलम' सैन सहेटनि भेटनि है तिनहू रति मैन विसेखे
मैं सखी रूप की छांह सी छ्वै कबहूँ अँखियाँ भरि कान्ह न देखे
मो तन चाहि उन्हें चितवैं सहिये कैसे माइ ये लोक परेखे[1]

(३८७)

कहा कहिये केहि सों कहिये हित सों कहिये कछु ना कहि आवै
देखत ही सब घोष घँघोवत देखत हीं हरि देखोई भावै
क्यों सुनि कै रहिये ग्रह ज्यों जमुना तट टेरनि आनि सुनावै
सो मुरली सुनि कै कवि 'आलम' दंद उदेग[2] उचाट उठावै

(३८८)

सटकारी लटैं रतनारे से नैननि अङ्गन अङ्ग अनङ्ग जगी
ढिग ठाढी तोसों हँसती जु हुती अब हीं उठि भीतर भौन भगी
मड़हा गढ़ है किधौं नंदलला जैसे मानत हौं कोउ और ठगी
नेकु न्यारे हु मोहि सु देखन देहु कहौ किनको नहिं कौन लगी

१—लोक परेखो = लोकापवाद का दुःख। २—उदेग = उद्वेग।

[३८९]

जोवन के फूल घन फूलनि मिलनि चली,
बीच मिले कान्ह सुधि बुधि बिसराई है।
बाँसुरी सुनत भई बाँसुरियो बाँसु री सु,
बाँसुरी की काहि 'सेख' आँसुनि अघाई है।
थकि थहराइ बहराइ बैठियो न कहूँ,
ठहराइ जोय ऐसी पुनि ठहराई है।
बारुनी बिरह आक बाक बकवास लगी,
गई हुती छाक दैन आपु छकि आई है॥

[३९०]

जहाँ तें निवारौं जाइ तहाँ उठि परैं धाइ,
हियो अति अकुलाइ लाज न करत हैं।
देख्यौ चाहैं बार बार मुरि नन्द के कुमार,
अति ही बंसी बिहार प्राननि हरत हैं।
देखे तें ह्वै मुरझात बिनु देखें बिललात,
दुख देत दुहूँ भाँति व्याकुल करत हैं।
मारि मारि मीजि कै मरूरन मरोरि डारी,
मेरे नैना मेरी माई मोहीं सों अरत हैं॥

[३९१]

फूलि फुलवारी रही उपमा न जाइ कही,
कहा धौं सराहौं ताते जोति अधिकानी है।
'आलम' कहै हो धरी मोतिन की पाँति खरी,
हीरनि की काँति छवि देखि कै लजानी है।

दारिम दरकि गये घाके समुहँ न भये,
रवि की चमक किती वार मैं बखानो है।
तनक हँसनि मैं दसन ऐसे देखियत,
दीपत नछत्र मानो दामिनी दुरानी है॥

[३६२]

काम कलेसहिं भेष फिरो सब कामहिं नेकु परै कल कैसें।
'आलम' ए अलि नैन अली मुख वारिज वाफु[1] रहै नहिं तैसें।
सीता के सोक मैं तापन राम बिलापन आप तयो तनु तैसें।
छीन मलीन अधीन दुखी दिन रैनि गये रजनी पति जैसें।

[३६३]

केसू कुरहरे[2] अध जरे मानो कैला धरे,
कैनहाई कोयल करेजो भूँजे खाति है।
फूली वन वेली पै न फूली हौं इकेली तन,
जैसी तलवेली औ सहेली न सुहाति है।
चहुँघा चकित चंचरीकनि की चारु चौंप,
देख 'सेख' रानी चौंप छाती खोंप[3] जाति है।
होन आयो अंत तंत मंत पै न पायो कछू,
कंत सों वसाति ना वसंत सों वसाति है॥

[३६४]

रैनि गढ़ गूढ़ रही 'आलम' अकास मिलि,
चन्दु गढ़पति जानै अटल अटूटि है।
दौरि दिनु लाग्यो नारि मेरु भरि सूर आगे,
गोला छूटि लाग्यो तातें पुछपौरि फूटि है।

१—वाफु = विना, बगैर। २—कुरहरे = चितकबरे (आधे काले आधे लाल।) ३—खोंप जाति है = घुस जाती है।

दिसि की उजारी जानी जोन्ह भीति भहरानी,
हलमले द्विजराज जाम सौम छूट्र है।
आपु चल्यौ अकुलाइ छपति नछत्र पाछें,
दल भाजे जात प्रात पनहरी लूटि है॥

[३६५]

बरुनी कटीली भौंहैं कुटिल कटारी सी हैं,
काम को विचित्र ऐसी काके पर डारिहैं।
अलक तिलक नैन अनग अनंग टीको,
अनियारे औ उतंग उर पर टारिहैं।
'आलम' कहै हो कहूँ कान्ह जू कितै है आइ,
सोचति तब न अब रीझ न सँभारिहैं।
जोबन की माती ग्वारि अंचर सुधारि देह,
दैव की सँवारी काहू मानसहि मारिहैं॥

शान्तरस

(३६६)

अलि पतंग मृग मीन दीन छबि छीन नलिन पुनि।
गज बाजी कुन्दनहिं हंस सारस कदली गुनि।
कोकिल कीर कपोत कुन्द जो पटतर भाषहिं।
हौं क्यों यहि विधि कहौं बुद्धि अनचाहत नाषहिं।
वृषभान सुता सम कहन कहँ, 'आलम' त्रिभुवन में जु कछु,
यह मन बच क्रम कै जानियहु कहि कहिबी सो सबै तुछ।

(३६७)

सेजु सुखासन हेम हीर पट चीर विविधि वर,
निरखि निरखि मन मुदित होत निज सुख संपति पर।
आपु बनै वनिता बनाइ बिलसत बिलास अनि,
जग रक्षक जगदीस सो जु भूल्यो जु अलप मति।
अजहूँ सँभारि 'आलम' सुकवि, जौ लौं अन्तक नहिं ग्रस्यो,
पग डगमगात हेरत हँसत, बिरह भुअंगम को डस्यो।

इतिश्री आलमकृत आलमकेलि समाप्तम्।